PUBLICATIONS DIVISION
Ministry of I. & B.
LIBRARY
16 APR 1957

कुरुक्षेत्र

फरवरी १९५७ मूल्य : चार आना

ग्राम सेवक

सामुदायिक विकास-मन्त्रालय द्वारा प्रकाशित 'ग्राम सेवक' मासिक पत्र का हिन्दी संस्करण ग्रामवासियों के उपयोगार्थ निकाला गया है जिससे कि ग्राम-सुधार की विभिन्न योजनाओं के बारे में ग्रामीण जनता को सामयिक सूचना और समाचार मिलते रहें। भाषा अति सरल और छपाई सुन्दर।

वार्षिक मूल्य १।) : एक प्रति =)

बाल भारती

नन्हें मुन्नों की सचित्र मासिक पत्रिका जिसमें सरल भाषा में मनोरंजक कहानियाँ, शिक्षाप्रद कविताएँ, उपयोगी लेख और रेखाचित्र प्रस्तुत किए जाते हैं।

वार्षिक मूल्य ४) : एक प्रति ।=)

कुरुक्षेत्र

सचित्र मासिक पत्र जिसमें देश के सामुदायिक विकास कार्यक्रम-सम्बन्धी समाचार तथा लेख प्रकाशित होते हैं।

वार्षिक मूल्य २॥) : एक प्रति ।)

आकाशवाणी प्रसारिका

(सचित्र त्रैमासिक)

'आकाशवाणी प्रसारिका' (रेडियो संग्रह) आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से प्रसारित उच्च कोटि की चुनी हुई वार्ताओं, कविताओं तथा कहानियों आदि का त्रैमासिक संग्रह है। सुन्दर गेट-अप की इस सचित्र पत्रिका का मूल्य ८ आना है। वार्षिक मूल्य २)

आजकल

हिन्दी के इस सर्वप्रिय सचित्र मासिक पत्र में भारत भर के प्रसिद्ध साहित्यकारों के विचारपूर्ण लेख, कविताएँ तथा कहानियाँ पढ़िए। साथ ही 'आजकल' में भारतीय कला व संस्कृति के अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर प्रामाणिक लेख प्रकाशित किए जाते हैं।

वार्षिक मूल्य ६) : एक प्रति ॥)

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली-८

कुरुक्षेत्र

सामुदायिक विकास मन्त्रालय का मासिक मुखपत्र

वर्ष २] फरवरी १९५७ [अंक ४

विषय-सूची

आवरण चित्र [फोटो : हरबंससिंह]		
गाँवों में लोकतन्त्र	एस. एस. मोरे	२
भारत अमेरिका से क्या सीखे ?	....	४
ऊसर से सोना [नाटक]	ओंकारनाथ श्रीवास्तव	६
डाक के नए टिकट, लिफाफे, पोस्टकार्ड	...	८
आइए, पैदावार बढ़ाने की प्रतिज्ञा करें !	...	९
सामुदायिक विकास और हमारी असफलताएँ	टी. एस. अविनाशलिंगम	११
हमारी प्रथम ग्राम यात्रा	कामेश्वरप्रसाद चौबे	१३
चित्रावली	...	१५-१८
मेरी लखनऊ यात्रा	पी. दास	१९
सुमेरपुर विकास खण्ड की प्रगति	गणेशराम चौधरी	२३
भूदान	गोकुलभाई भट्ट	२५
ये भूदानी टोलियाँ [कविता]	मदनविरक्त	२८
एक ब्लाक की झाँकी [कविता]	व्यंकटराव यादव	२९
देहातों में चतुर्मुखी प्रगति	...	३०
प्रगति के पथ पर	...	३१

सम्पादक :
केशवगोपाल निगम
[सहकारी सम्पादक, प्रकाशन विभाग]
उप-सम्पादक : *अशोक*

मुख्य कार्यालय
ओल्ड सेक्रेटेरिएट,
दिल्ली—८

वार्षिक चन्दा २॥)
एक प्रति का मूल्य ।)

विज्ञापन के लिए
बिजनेस मैनेजर, पब्लिकेशन्स डिवीजन
दिल्ली—८ को लिखें

गाँवों में लोकतन्त्र

एस० एस० मोरे

भारत ने सदियों पुरानी गुलामी का जुआ उतार फेंका है। इस शान्तिपूर्ण राजनीतिक क्रान्ति के बाद सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाना ज़रूरी है। गरीबी और निरक्षरता को हमें दूर भगाना है और जनता का जीवन-स्तर काफी ऊँचा उठाना है। यद्यपि यह क्रान्तिकारी परिवर्तन अत्यावश्यक है, पर हमें लोकतन्त्री तरीके से धीरे-धीरे ही आगे बढ़ना है। हमारे संविधान में कहा गया है कि हमारा अन्तिम ध्येय सामाजिक एवं आर्थिक समानता है और इसकी प्राप्ति के लिए हम लोकतन्त्री तरीके अपनाएँगे।

सभी प्रगतिशील विचारों वाले वर्ग इस ध्येय को स्वीकार करते हैं। पर इस ध्येय की प्राप्ति के लिए अपनाए जानेवाले लोकन्तन्त्री तरीकों के सम्बन्ध में लोगों के भिन्न-भिन्न मत हैं। जब चार अन्धे एक हाथी का वर्णन करने लगे, तो किसी ने कुछ बताया, किसी ने कुछ। ठीक इसी तरह भिन्न-भिन्न व्यक्ति लोकतन्त्र के बारे में अपने-अपने विचार प्रकट करते हैं और पाश्चात्य देशों में प्रचलित विभिन्न पद्धतियों के उदाहरण देते हैं।

इन सब में से दो प्रकार की परस्पर विरोधी पद्धतियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। एक पद्धति के अनुसार सत्ता उच्च स्तर पर कुछ व्यक्तियों के हाथ में केन्द्रीभूत रहती है। दूसरे शब्दों में इस पद्धति में स्वायत्त शासन का कोई स्थान नहीं होता और अधिकांश नागरिकों का केवल एक ही कर्त्तव्य रह जाता है कि सैनिकों की तरह अनुशासन में रहकर हुक्म बजाते चलें। **इस प्रकार की पद्धति में सर्वोच्च स्तर पर तो लोकतन्त्र होता है पर निम्न-स्तरों पर अधिनायकवाद का ही बोलबाला रहता है।**

दूसरी पद्धति में सत्ता विकेन्द्रित होती है। इसके अन्तर्गत स्थानीय इकाइयों के हाथ में अधिक अधिकार होते हैं। स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करने और अपनी समस्याएँ हल करने की ज़िम्मेवारी उन्हीं की होती है। इसके लिए उन्हें केन्द्रीय सरकार से आर्थिक और टैक्निकल सहायता मिलती है।

सवाल यह है कि भारत इनमें से कौन-सी पद्धति आसानी से अपना सकता है?

किसी भी देश को यह खुली छूट नहीं होती कि वह चाहे जो पद्धति अपना ले। देश की परम्पराओं, उसकी राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक विचारधाराओं, उसकी जनता का बौद्धिक स्तर और दृष्टिकोण, इन सबका का ध्यान रखते हुए ही कोई पद्धति अपनाई जा सकती है। भारत में भी लोकतन्त्र का विकास करते हुए हम इन सब बातों को नज़रन्दाज़ नहीं कर सकते।

प्राचीन काल से भारत गाँवों का देश रहा है। विभाजन के बाद आज भी भारत में साढ़े पाँच लाख से अधिक गाँव हैं। गाँवों की स्थापना के समय से ही गाँवों में पंचायती ढंग का संगठन कायम रहा। शुरू-शुरू में गाँव की एक सभा होती थी जिसमें सब वयस्क व्यक्ति भाग लेते थे और अपनी समस्याओं पर विचार करते थे। यद्यपि बड़े घरानों के मुखियाओं का पंचायतों पर काफी प्रभाव था, तथापि शेष व्यक्ति भी अपनी राय प्रकट कर सकते थे। लार्ड ब्राइस के शब्दों में लोकतन्त्र का केवल यही मतलब है कि सारी जनता अपनी राय अपने मतों द्वारा प्रकट कर सके। इस मत के अनुसार तो प्राचीन ग्राम समुदाय लोकतन्त्रात्मक संगठन थे।

अंग्रेज़ी शासन ने इस ग्रामीण लोकतन्त्र को छिन्न-भिन्न कर दिया। पर साथ ही विदेशी शासन ने ऐसी परिस्थितियाँ भी उत्पन्न कर दीं जिनसे भारत में राष्ट्रीयता की भावना उत्तरोत्तर पनपती गई। और यह राष्ट्रीयता की भावना हमारे लिए एक वरदान थी, यद्यपि इसके बदले में हमें अपनी सदियों पुरानी स्थानीय स्वायत्त शासन की प्राचीन संस्था को छोड़ना पड़ा।

राष्ट्रीयता की भावना का उदय केवल भारत में ही नहीं हुआ। राष्ट्रीयता की भावना तो एक आधुनिक प्रवृत्ति है जिसका उदय संसार के सभी सभ्य देशों में हो चुका है। स्थानीय स्वायत्त शासन संगठन राष्ट्रीय सरकारों की अपेक्षा प्राचीन हैं। वास्तव में राष्ट्रीय सरकारें हैं भी क्या—कुछ छोटे-छोटे इलाकों की स्थानीय संगठनों का समह मात्र। मिसाल के तौर पर इंग्लैंड में पहले बहुत सी छोटी-छोटी सरकारें थीं, जिनका कार्य-क्षेत्र केवल गाँव ही था। उन्हीं स्थानीय सरकारों में से राष्ट्रीयता की भावना पैदा हुई। राष्ट्रीय सरकार और स्वायत्त शासन वाले गाँव में अब भी सम्बन्ध कायम हैं। श्री एच. जी. वेल्स ने अत्यन्त दृढ़तापूर्वक यह कहा था कि इंग्लैंड में लोकतन्त्र गाँव के पनघट से दूर नहीं पनप सकता। उन्होंने इस सत्य की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया कि लोकतन्त्र वहीं पनपता है जहाँ उसकी जड़ें छोटे से छोटे क्षेत्र के स्थानीय स्वायत्त शासन में जमी रहती हैं।

यद्यपि इस सिद्धान्त के बारे में धुआँधार भाषण दिए जाते हैं, पर इसे प्रायः अमल में नहीं लाया जाता। कभी अन्तर्राष्ट्रीय तनातनी का बहाना बना लिया जाता है कि सुरक्षा के लिए राष्ट्रीय स्तर पर व्यवस्था करने की आवश्यकता है। कभी यह कहा जाता है राष्ट्र के पुनर्निर्माण के लिए सत्ता का केन्द्रीकरण ज़रूरी है। पिछले दो महायुद्धों के बीच की अवधि में कई देशों में राजनीतिज्ञों ने इस नीति का अनुसरण किया और इसका फल यह हुआ कि स्थानीय स्वायत्त शासन प्रभावहीन हो गया। फलतः कई देशों में क्रूर तानाशाही की जड़ें मज़बूती से जम गईं।

जो कुछ यूरोप में हुआ, भारत को उससे सबक़ लेना चाहिए और अपने लोकतन्त्र को इन दोषों से बचाने के लिए विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। चाहे कुछ समय से ग्राम पंचायतों की दशा ठीक नहीं है, पर भारतीय लोकतन्त्र की प्रगति में, न केवल राष्ट्रीय स्तर पर, बल्कि ग्राम स्तर पर भी, उनका महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा।

हमारे संविधान और दो पंचवर्षीय योजनाओं ने स्पष्ट कर दिया है कि समुचित सुधारों के साथ पंचायतों के पुनर्गठन की कितनी आवश्यकता है। संविधान में जिस पंचायती राज्य की स्थापना का निर्देश है, उसकी यथोचित परिभाषा इसी प्रकार ही की जा सकती है—**गाँववालों की सरकार, गाँववालों द्वारा और गाँववालों के लिए।**

यद्यपि संविधान में यह घोषित कर दिया गया है कि पंचायती राज्य की स्थापना की जाए, पर इस बात को मूर्त रूप देने में कई रुकावटें हैं और देरी हो रही है।

यूरोप की तरह भारत में भी दो विचारधाराओं में संघर्ष चल रहा है। कुछ सत्ता का केन्द्रीकरण चाहते हैं और कुछ विकेन्द्रीकरण। कुछ राजनीतिज्ञों के मतानुसार एक कल्याणकारी राज्य में एक केन्द्रीय सरकार होनी चाहिए जो राज्य सरकारों के ज़रिए गाँवों के पुनर्निर्माण के लिए कदम उठाए। इस दृष्टिकोण को नौकरशाही का पूरा समर्थन प्राप्त है। पर यदि हम इस दृष्टिकोण को अपना लें तो न केवल स्थानीय और ग्रामीण स्वायत्त शासन संस्थाओं का विकास ही रुक जाएगा बल्कि उनका अस्तित्व भी ख़तरे में पड़ जाएगा।

इस दलील का केन्द्रीय और राज्य सरकारों पर भी प्रभाव पड़ा दीखता है और वे स्थानीय समस्याओं का हल ढूँढ़ने के लिए कई कार्यक्रम और योजनाएँ बना रही हैं। फोर्ड फाउण्डेशन सलाहकार डा० कार्ल सी० टेलर ने इस प्रवृत्ति की ओर ध्यान आकर्षित किया है। उन्होंने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि स्थानीय समस्याएँ आज भी देहाती लोगों की मुख्य समस्या हैं और भारत की प्रगति के लिए इन समस्याओं का हल ढूँढ़ना बहुत ज़रूरी है। इस ग़लत और लोकतन्त्री दृष्टिकोण के कारण देहातियों में प्रेरणा शक्ति का नाश हो रहा है और गाँववालों की नेतृत्व शक्ति का हनन हो रहा है। एक और फोर्ड फाउण्डेशन सलाहकार डा० विल्सन ने भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के बारे में अपनी रिपोर्ट में लिखा कि उन्हें एक खण्ड विकास अधिकारी ने बताया था कि गाँवों में काम की शुरुआत बहुत धीमी है। इसका कारण यह था कि गाँवों में न तो कोई संगठन ही था और न नेतृत्व ही। इसका कारण यह है कि गाँववालों को उत्तरदायित्व सौंपने के लिए हम तैयार नहीं थे जिसके परिणामस्वरूप उनमें अपनी समस्याएँ हल करने के लिए लगन और उत्साह पैदा नहीं हुआ।

प्रगति में रुकावट पड़ने का एक और कारण यह है कि अधिकांश अफ़सरों में देहातियों के प्रति एक प्रकार की हीन भावना विद्यमान है। इस बात का भान उस समय होता है जब प्रायः अफसर यह शिकायत करते हुए सुने जाते हैं कि गाँववाले अनपढ़ होते हैं, जात-पाँत के बन्धनों में जकड़े रहते हैं तथा आलसी होते हैं और इसलिए उन्हें कोई अधिकार देना साधनों का महज़ अपव्यय ही होगा। इस दलील का लार्ड रिपन ने १८८२ के स्थानीय स्वायत्त शासन वाले प्रसिद्ध प्रस्ताव में करारा उत्तर दिया था—

> **'शुरू में ही गवर्नर जनरल इन कौंसिल यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि स्थानीय स्वायत्त शासन के विस्तार का समर्थन करते हुए तथा कई स्थानीय मामलों में इस सिद्धान्त को लागू करते हुए वह यह नहीं समझते कि शुरू में ही इन संस्थाओं का काम ज़िला अधिकारियों के काम की अपेक्षा अधिक अच्छा होगा। इस सिद्धान्त को अपनाने और लागू करने का मुख्य उद्देश्य यह नहीं कि शासन व्यवस्था में सुधार किए जाएँ। मुख्य रूप से तो इसका उद्देश्य जनसाधारण को राजनीति की शिक्षा देना है। गवर्नर जनरल को इस बात में कोई सन्देह नहीं कि समय के साथ-साथ स्थानीय प्रशासन की दक्षता भी बढ़ती जाएगी। निस्सन्देह शुरू में कुछ दिक्कतें आएँगी और इससे जो बड़ी-बड़ी आशाएँ बाँधी गई हैं, वे पूरी होती न दीख पड़ेंगी और कई बार तो स्वायत्त शासन एक बुराई ही प्रतीत होगा।**

आज़ादी मिलने के बाद कांग्रेसी राज्य में भी कुछ अफ़सर, अंग्रेजी राज्य में गाँववालों पर विश्वास न करने की दूषित मनोवृत्ति के शिकार हैं। डा० टेलर ने एक बार कहा था कि सरकारी अफ़सरों का गाँववालों के निकायों में कोई विश्वास नहीं है और इसलिए वे सब निर्णय उच्च स्तर पर ही करने की चेष्टा करते हैं।

[शेष पृष्ठ १२ पर]

भारत अमेरिका से क्या सीखे ?

भारत और अमेरिका में कृषि की कई बातों में विरोधाभास है। ज़मीन अधिक तथा काम करने वाले कम होने के कारण अमेरिका में उपज प्रति एकड़ की बजाय प्रति व्यक्ति के हिसाब से आँकी जाती है। वास्तव में तो पश्चिमी यूरोप के कई देशों में, जहाँ ज़मीन का पूरा-पूरा उपयोग किया जाता है, प्रति एकड़ उपज अमेरिका की अपेक्षा कहीं अधिक होती है। यह स्पष्ट ही है कि अधिक आदमी होने से प्रति एकड़ उपज अधिक बढ़ सकती है। जब कृषि के अतिरिक्त दूसरे धन्धों का भी काफी विस्तार हो जाता है, तब कुछ लोग कृषि का धन्धा अपना लेते हैं और कुछ लोग अन्य धन्धे। सत्य तो यह है कि यदि कृषि को भी एक धन्धे की तरह अपनाया जाए, तो उसमें अन्य धन्धों जितना फायदा हो सकता है। पर भारत में तो अधिकांश जनता कृषि को जीविका के एकमात्र साधन के रूप में अपनाती है न कि एक धन्धे के रूप में। इसी तरह एक और अन्तर यह है कि यद्यपि अमेरिका में भी अभी तक ज़मीन और कई अन्य साधनों का पूरा उपयोग नहीं हुआ, पर शिक्षा, जीवन के उच्च स्तर और भौतिक सुखों की आकांक्षा के कारण वहाँ कृषि विस्तार की समस्याएँ भारत की अपेक्षा बुनियादी रूप से भिन्न हैं। जहाँ अमेरिका में एक पुस्तिका प्रकाशित करके या टेलीफ़ोन तथा रेडियो द्वारा किसानों को किसी नए कृषि सुधार से परिचित कराया जा सकता है, वहाँ भारत में एक नए तरीके को धीमे-धीमे ही, और वह भी किसान को काफी समझाने-बुझाने के बाद, उसके मन में विश्वास बिठाने के बाद अपनाया जा सकता है। एक और उलेखनीय अन्तर यह है कि अमेरिका में सरकार किसान को आर्थिक सहायता दे कर परती भूमि छोड़ने के लिए प्रेरित करती है और दूसरी ओर भारत में अधिक अन्न उपजाओ का आन्दोलन चलाकर परती भूमि में भी खेती करने को कहा जाता है।

अमेरिका में गवेषणा, शिक्षण और विस्तार के कई अभिकरण हैं और वहाँ कृषि की सब से बड़ी समस्या उन अभिकरणों में समन्वय स्थापित करना है। इसके विपरीत भारत में सब से बड़ी समस्या एक ऐसे अभिकरण की स्थापना करना है जो कि देश की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई माँगों को पूरा करने में सक्षम हो। कृषि-विस्तार का भारत में अब तक विकास नहीं हुआ। १० लाख से लेकर ५० लाख किसान परिवारों के पीछे भारत में एक ही कृषि कालेज होता है। इतने विशाल क्षेत्र की समस्याओं का हल एक कालेज नहीं ढूँढ़ सकता। सम्भव है कि ज़िलों के बुनियादी कृषि स्कूल समय पाकर सूचना केन्द्र के रूप में विकसित हो जाएँ, क्योंकि उस समय तक कालेज के कई विद्यार्थी अपना प्रशिक्षण समाप्त कर के खेतों में काम कर रहे होंगे। जब ऐसा समय आ जाएगा, उस समय गवेषणा करने के लिए कृषि स्कूलों में अधिक स्टाफ रखना पड़ेगा। अब विस्तार तथा गवेषणा का अधिकतर काम सरकारी प्रयत्नों द्वारा ही किया जा सकता है और यद्यपि कृषि समस्याओं के हल के लिए राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं का प्रयत्न पिछले सब प्रयत्नों से अधिक उत्तम एवं प्रगतिशील है, तथापि एक खण्ड के १०-१२ हज़ार किसान परिवारों के लिए १० ग्राम सेवक, एक कृषि विस्तार सलाहकार और एक पशुपालन विस्तार सलाहकार अपर्याप्त हैं। उनकी संख्या कम से कम दुगुनी कर दी जानी चाहिए।

इन अन्तरों के होते हुए भी हम अमेरिका से काफ़ी कुछ सीख सकते हैं। अमेरिका में किसानों की समस्याओं के बारे में गवेषणा और शिक्षा साथ-साथ चलती हैं। गवेषणा और विस्तार का कार्य मुख्य रूप से किसान ही करते हैं। वे अपना काम खुद अपने हाथों से करते हैं। उन्हें अपने विषय का कोरा किताबी ज्ञान ही नहीं होता, वे खुद भी फ़सल बोना और काटना जानते हैं। पर हमारे यहाँ व्यावहारिक शिक्षण पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। इस पद्धति को भारत में अपना लिया जाना चाहिए। गवेषणा-कार्य करने वाले और विस्तार कार्यकर्त्ताओं के पदों का परस्पर तबादला भी काफी लाभकर होगा। निस्संदेह आज भारत में कार्यकर्त्ताओं की न तो संख्या ही अधिक है और न ही उनका कार्य कुछ उल्लेखनीय है, और सम्भव है कि ऐसे तबादलों से शुरू में प्रगति में कुछ रुकावट भी पड़े, तो भी कुछ हद तक और कुछ अवस्थाओं में तो यह तबादला अत्यावश्यक है। उदाहरण के तौर पर वरिष्ठ गवेषणा सहायक और कृषि विस्तार सलाहकार का तबादला होना चाहिए और दोनों क्षेत्रों में दो-तीन वर्ष की सन्तोषप्रद सेवा को उनकी तरक्की का आधार बनाया जा सकता है। सम्भव है कि इसे लागू करने में कुछ समय लगे, पर यह सुधार बहुत लाभकारी रहेगा। जैसा कि बिहार में किया गया है, यदि जिला कृषि अधिकारी (विस्तार) के साथ कुछ विषयों के विशेषज्ञ, फिर चाहे वे वरिष्ठ न भी हों, नियुक्त किए जाएँ तो यह एक बड़ा महत्वपूर्ण कदम होगा। इन खण्डों में जो समस्याएँ सामने आती हैं, उनमें से ६० प्रतिशत ऐसी हैं जिनका हल ये नवयुवक विशेषज्ञ ढूँढ़ सकते हैं। आजकल हाल यह है कि इनमें से अधिकतर समस्याएँ प्रादेशिक संस्थाओं

के पास हल के लिए भेज दी जाती हैं, जिससे उनका बहुत-सा समय बरबाद हो जाता है। इसी तरह यदि विस्तार कार्यकर्त्ताओं को काम करते हुए ही गवेषणा के परिणामों के बारे में वर्ष में एक बार प्रशिक्षण दिया जाए तो गवेषणा संस्थानों को छोटी-मोटी चीज़ों में सिर खपाने की आवश्यकता नहीं रहेगी। स्नातक परीक्षा का पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए कि सब स्नातक कृषि के सब विज्ञानों की पृष्ठभूमि से परिचित हों, स्वयं अच्छे किसान हों तथा उन्हें इस बात का पता हो कि और जानकारी कहाँ से प्राप्त की जा सकती है। स्नातक ऐसा शहरी नहीं होना चाहिए जो स्वयं फसल को बो अथवा काट ही न सके। क्योंकि यदि ऐसा हो, तो वह गवेषणा तो कर ही नहीं सकेगा, साथ ही अच्छी खेती और विस्तार की समस्याओं का हल ढूँढ़ने में वह किसानों का विश्वास भी प्राप्त न कर सकेगा। कृषि और विस्तार के विभिन्न विषयों का ज्ञान होने के साथ, एक कृषि स्नातक इस योग्य भी होना चाहिए कि वह अपने क्षेत्र की महत्वपूर्ण फ़सल कुशलता से उगा सके और उसकी उपज भी उस इलाके की औसत उपज से तो कम होनी ही नहीं चाहिए।

भारत में अभी तक विस्तार के विभिन्न उपायों की कुशलता के बारे में गवेषणा नहीं की गई है। यद्यपि उपज आदि बढ़ाने के लिए खेतों में जो प्रदर्शन किए गए हैं, वे काफी सफल रहे हैं; पर अमेरिका की तरह खेती के विभिन्न तरीकों का अध्ययन नहीं किया गया ताकि खेती के विभिन्न सफल तरीकों का पता लग सके और सर्वोत्तम तरीके पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जा सके। खेती के नए तरीके को अपनाना एक जटिल प्रणाली होती है। काफ़ी सोच-समझ और परीक्षण के बाद ही नया तरीका अपनाया जाता है। कुछ थोड़े से प्रगतिशील किसान ही ऐसे होते हैं जो सीधे ही किसी नए तरीके को अपना लेते हैं। अधिकांश किसान तो किसी नए तरीके को तभी अपनाते हैं जब वे अपनी आँखों से देख लेते हैं कि वह तरीका पास-पड़ौस में सफलतापूर्वक अपना लिया गया है। कुछ तरीके तो ऐसे होते हैं जिन्हें जल्दी ही अपना लिया जाता है, पर कुछ तरीके ऐसे होते हैं जिन्हें अपनाने के लिए किसानों को राज़ी करने में विस्तार अभिकरणों को वर्षों तक मगज़-पच्ची करनी पड़ती है। अमेरिका में इस बात का निरन्तर अध्ययन किया जाता है कि किस उपाय से किसान नए तरीके को अपना लेंगे। विस्तार कर्मचारियों को इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि विभिन्न अवस्थाओं में क्या उपाय अपनाए जाएँ। साथ ही उनको यह भी पता होना चाहिए कि ये उपाय किस प्रकार के व्यक्तियों के लिए अपनाए जा रहे हैं। उदाहरण के तौर पर यदि अनपढ़ व्यक्तियों के लिए पुस्तिकाएँ आदि छापी जाएँ, तो वह केवल शक्ति का अपव्यय ही होगा। ये उपाय तभी प्रभावकारीसिद्ध होंगे, जब कि विस्तार कर्मचारी अपने क्षेत्र के निवासियों के रीति-रिवाजों और भावनाओं का आदर करें और विभिन्न उपायों से उन्हें न तरीके अपनाने के लिए प्रेरित करें। नए तरीकों को तभी अपनाया जाता है जब वे लाभकारी हों और जनता की भावना से मेल खाते हों। अमेरिका की तरह भारत में भी इस सम्बन्ध में अध्ययन करने की नितान्त आवश्यकता है।

किसानों की बड़ी संख्या और समस्याओं की विशालता को देखते हुए, हमारी वर्तमान व्यवस्था इतनी सक्षम नहीं है कि भूमि व्यवस्था के नियन्त्रण के बारे में कोई भी विस्तृत कार्यक्रम चलाया जा सके। कुछ थोड़े से लोगों को तो, जिनके पास अधिक ज़मीन है, खेती के नए तरीके समझाए जा सकते हैं। पर अधिकांश किसानों को, जिनके पास बहुत ही थोड़ी ज़मीन है और वह भी छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित है, उस समय तक खेती के अच्छे तरीके अपनाने के लिए प्रेरित करने की नैतिक ज़िम्मेदारी नहीं ली जा सकती जब तक फसल के खराब होने या स्थिति के बिगड़ने की दशा में गारण्टी न दी जाए।

अमेरिका में 'फोर-एच०' आन्दोलन ने नवयुवकों को अच्छा नागरिक बनाने और उनमें सहकार की प्रवृत्ति पैदा करने में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है। भारत में अधिकांश युवकों को शिक्षा ही नहीं मिलती। समय से पूर्व ही उन्हें वयस्कों की तरह रुपए-पैसे की चिन्ता करनी पड़ जाती है और इस तरह वे अपनी युवावस्था का पूरा सदुपयोग नहीं कर पाते। इसका एक बड़ा कारण गरीबी है। निस्संदेह इस सम्बन्ध में आवश्यक है कि सरकार रुपए-पैसे से सहायता करे। प्रत्येक खण्ड में एक सुप्रशिक्षित नेता, जिले में एक प्रतिनिधि और राज्य के मुख्य कार्यालय में एक सहायक विकास अधिकारी इस दिशा में काफी अच्छा काम कर सकते हैं। कार्यक्रम की रूपरेखा, कृषि, पशु-पालन, सहकारिता आदि विभागों के प्राविधिक अधिकारी तैयार करते हैं। उसकी सफलता काफी हद तक कार्यक्रम पर निर्भर करेगी। कार्यक्रम ऐसा होना चाहिए जिसे स्थानीय नवयुवक शारीरिक और मानसिक दृष्टि से अपनाने में सक्षम हों। धन की भी इस कार्यक्रम के लिए अत्यन्त आवश्यकता है। 'फोर-एच०' आन्दोलन की भावना को अपनाना बहुत उपयुक्त होगा। कार्यक्रम के अन्तर्गत शारीरिक स्वास्थ्य एवं मानसिक विकास पर भी अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिए। आजकल शिक्षा संस्थाओं में राष्ट्रीय केडेट कोर और स्काउट आन्दोलनों में इस सम्बन्ध में कुछ ध्यान दिया जाता है। इसलिए कार्यक्रम बनाते समय काफी सावधानी से विश्लेषण करने की आवश्यकता है। पर वास्तविक सफलता तो खण्ड कार्यकर्त्ताओं के प्रशिक्षण और उनके उत्साह पर निर्भर करेगी।

(संयुक्त राज्य अमेरिका की अध्ययन-यात्रा रिपोर्ट से)

ऊसर से सोना

ओंकारनाथ श्रीवास्तव

मास्टर—कहो, क्या बात है, चौधरी ! आज बहुत खुश दीखते हो ?

चौधरी—अरे, तुम्हें पता नहीं, भाई मास्टर, आज हमारा खास दिन है। लो थोड़ा जलपान तो कर लो।

मास्टर—जलपान ! आज कैसी बातें कर रहे हो चौधरी जी ?

चौधरी—हाँ, भाई मास्टर, जैसे लोग होली-दिवाली घर आए मेहमान को जलपान कराए बिना नहीं जाने देते, वैसे ही हमारे लिए आज का दिन भी एक त्यौहार है। इसी को हमारी दिवाली समझो।

मास्टर—पहेली-सी बुझा रहे हो, चौधरी जी ! अच्छा लाओ, पहले जलपान कर लूँ।

चौधरी—लो पहले यह खाओ।

मास्टर—अहा ! यह तो बड़ा ही स्वादिष्ट गुड़ है। क्यों, चौधरी जी, इसमें क्या मिलाया है ? यह तो बड़ी ही बढ़िया चीज़ खिलाई तुमने।

चौधरी—एक दम शुद्ध गुड़ है।

मास्टर—हम को पाठ न पढ़ाओ, चौधरी जी ! जानते हो, मैं गन्ना हर साल बोता हूँ। खुद अपना कोल्हू चलाता हूँ। शुद्ध गुड़ की पहचान तुम नहीं सिखा सकते। ज़रूर इसमें तुमने कुछ मिलाया है।

चौधरी—नहीं भाई, यह शुद्ध गुड़ है और इसे अपने नम्बरदार ने तैयार किया है।

मास्टर—बस, बस, चौधरी जी हमें बनाओ मत।

चौधरी—यही तो कमाल है, भाई ! अच्छा, सुनो, तुम्हें बता ही दूँ—यह है ताड़-गुड़।

मास्टर—ताड़-गुड़ ? ताड़-गुड़ क्या होता है ?

चौधरी—जैसे तुम्हारे गन्ने के पेड़ तुम्हें गन्ना-गुड़ देते हैं, वैसे ही हमारे ताड़ के पेड़ हमें ताड़-गुड़ देते हैं।

मास्टर—सच !

चौधरी—हाँ भाई, बिलकुल सच ! नहीं तो, क्या मैं झूठ बोल सकता हूँ ?

मास्टर—तो, भाई चौधरी जी, यह कैसे बनता है ? ज़रा हमें भी तो बताओ।

चौधरी—अरे, देखो, वह जो ताड़ का रस होता है न.....

मास्टर—साफ़-साफ़ क्यों नहीं कहते, चौधरी जी···ताड़ी।

चौधरी—न न.....न न.....अब उसका नाम न लो।

मास्टर—क्यों ?

चौधरी—पुरानी बातों को भूल जाओ, मास्टर जी। बाबा सूरदास कह गए हैं—

जिन मधुकर अंबुज-रस चाख्यो, क्यों करील फल खावै ?
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै ?

तो, भैया, जिस ताड़ के रस से इतना बढ़िया, मीठा अमृत जैसा गुड़ बनता है, उसका क्या ज़हर बना कर पिएँ ? कहाँ यह ईमानदारी का धन्धा, जिसमें घर भर लग कर काम करें और सब का पेट भरे और कहाँ वह चोरी का काम—ज़हर पिएँ और दूसरों को पिलाएँ और पकड़े जाएँ तो जेल भी जाएँ.....अरे, लो खाओ न, कितना स्वादिष्ट है यह गुड़।

मास्टर—हाँ, भाई, चौधरी जी ! यह तो सचमुच अमृत है। कैसे ज्ञान की बातें करने लगे हो तुम ?

चौधरी—ज्ञानी तो मैं पहले का ही हूँ रे, मगर, हाँ, तब ज्ञान और तरफ़ चलता था, अब और तरफ़।

मास्टर—ठीक कहते हो, चौधरी जी ! मगर भला यह तो बताओ कि यह नई कला तुमने सीखी कहाँ से ?

चौधरी—इसकी भी बड़ी मज़ेदार कहानी है। मास्टर जी ! देखो, जैसे कीचड़ से कमल निकलता है और रात से दिन निकलता है, उसी तरह बुराई से अच्छाई निकल आती है, हैं न ?

मास्टर—ठीक है।

चौधरी—यह जो अपना नम्बरदार है न ?

मास्टर—हाँ, जानता हूँ।

चौधरी—उसी का तो यह सब किया-धरा है।

मास्टर—अच्छा ?

चौधरी—हाँ, वही उद्योग शाला से ताड़-गुड़ बनाने का तरीका सीख आया। अब वह ताड़-गुड़ बनाता है, ईमानदारी की कमाई खाता है और ऊपर से सरकार उसकी मदद भी करती है। सरकारी अफ़सर उसकी इज्जत करते हैं।

मास्टर—अरे, तो ज़रा बुलाओ न उसको। कहाँ गया नम्बरदार ? ज़रा मैं भी पूछ देखूँ।

चौधरी—अरे, नम्बरदार, ओ, नम्बरदार ! देखो मास्टर काका आए हैं।

नम्बरदार—आया, चौधरी जी !

मास्टर—कहो, भाई, नम्बरदार ! चौधरी क्या कह रहे हैं ? आज क्या बात है ?

नम्बरदार—आज हमारे लिए त्यौहार का दिन है, मास्टर जी ! आज सारे देश में राष्ट्रीय ताड़-गुड़ दिवस मनाया गया है। आज सरकारी अफ़सर लोग हमारे यहाँ आएँगे, उनके स्वागत का इन्तज़ाम कर रहा हूँ। ताड़-गुड़ की मिठाइयाँ तैयार की हैं।

मास्टर—तुम तो भैया ताड़-गुड़ की मिठाइयाँ बनाने लगे, हमें ताड़-गुड़ ही बनाना सिखा दो।

नम्बरदार—जाने दो, मास्टर जी, क्या करोगे जान कर.....। तुम तो गन्ना बोते हो, तुम भला क्यों ताड़-गुड़ बनाना सीखोगे ?

मास्टर—ऐसा क्यों, भैया ? हम सीखे लेंगे तो हम भी ताड़-गुड़ बनाएँगे। हमारी काफ़ी ज़मीन गन्ना बोने में निकल जाती है, उसमें गेहूँ बोएँगे। हमें खड़ी फ़सल अपना गन्ना बेच देना पड़ता है। ठेकेदार और मिलवाले हमारी मेहनत की कमाई खा जाते हैं। अगर हम ताड़-गुड़ बनाने लगें, तो कितना अच्छा हो।

नम्बरदार—मगर ताड़-खजूर के पेड़ कहाँ से लाओगे, काका ? क्या हमारे पेड़ों में साझा करोगे ? बेदखली तो नहीं करा बैठोगे ?

मास्टर—बेदखली वाले दिन चले गए, भैया ! अब तो किसान की अपनी ज़मीन है। उसका अपना हक है। बेदखली कौन कर सकता है ? मगर मैं कोई कच्चा किसान थोड़े ही हूँ। मैंने भी अभी बैठे-बैठे एक जुगत सोच ली है।

नम्बरदार—वह भी सुनाओ।

मास्टर—अरे, सीधी-सी जुगत है, भैया ! हमारे खेतों में इतनी मेंड़ें हैं। उन्हीं पर हम ताड़ के जितने चाहें, उतने पेड़ लगा सकते हैं।

चौधरी—वाह रे, मास्टर ! तू तो बड़ा उस्ताद निकला। इतनी-सी देर में इतनी ज़ोरदार जुगत सोच डाली।

मास्टर—तो, और क्या, चौधरी जी ! घर बैठे लक्ष्मी आने की बात हो और दिमाग़ तब भी न चले, ऐसा कैसे हो सकता है।

चौधरी—मगर और सामान कहाँ से लाओगे ? क्यों रे, नम्बरदार। है कोई जुगत ?

नम्बरदार—काम करने वाले के लिए जुगत ही जुगत है, दादा ! सरकार हमारी हर तरह से मदद करने को तैयार है।

मास्टर—सच भया ? तो हमें बताओ न।

नम्बरदार—काका ! तुम तैयार हो तो आज ही अफ़सर लोग आएँगे, उनसे तुम बात कर लेना। वे तुम्हें ताड़-गुड़ बनाने का सारा सामान नाममात्र की कीमत लेकर दे देंगे और ताड़-गुड़ बनाना भी सिखा देंगे। बस, फिर खूब ताड़-गुड़ बनेगा, चैन की बंसी बजेगी।

चौधरी—नम्बरदार ! तू तो कुछ समझता नहीं है। मैं कहता हूँ अगर सभी लोग ताड़-गुड़ बनाने लगेंगे, तो हमारे ताड़-गुड़ को कौन पूछेगा ? माटी के मोल भी न बिकेगा।

नम्बरदार—नहीं, दादा ! ऐसी बात नहीं है। हमारे यहाँ काफ़ी ताड़गुड़ बनने लगेगा, तो सरकार यहाँ एक ताड़-गुड़ कोआपरेटिव खोल देगी। हमारा गुड़ मण्डियों में जाने लगेगा और हमें और भी अच्छे दाम मिलने लगेंगे। आज देश भर में हज़ारों कोआपरेटिव बन चुकी हैं।

चौधरी—हाँ, ऐसा। तब तो, भैया, नम्बरदार, तुम भी जल्दी ही यह काम शुरू कर दो। अभी तो कितने ही ताड़ के पेड़ बचे हैं, तुम उनसे रस निकालना शुरू कर दो।

नम्बरदार—यही नहीं, रेलवे लाइन वाले ताड़ भी सरकार अब हम लोगों को ठेके पर दे दिया करेगी। मैं आज अफ़सरों से बात कर लूँगा। इसी बीच में नए ताड़ लगाने का काम भी शुरू हो जाएगा। अफ़सर लोग बताते हैं कि देश भर में लाखों एकड़ ऐसी ज़मीन पड़ी है जो खेती के काबिल नहीं है, परन्तु उस पर ताड़ मज़े में लग सकते हैं। इस तरह ऊसर भूमि सोना उगल सकती है।

मास्टर—सोना उगल कर क्या होगा, हमें तो गुड़ से मतलब।

नम्बरदार—यह गुड़ भी सोना ही है, दादा ! मीठा सोना !

चौधरी—ठीक कहता है, नम्बरदार।

मास्टर—हाँ, हाँ, अब मैं समझ गया। मैं तो समझा था सचमुच ही सोना।

नम्बरदार—दादा ! तिजोरियों में बन्द रखने वाले सोने से हमें क्या मतलब ? हमारा सोना तो यही खेत, खलिहान, ताड़, खजूर हैं, अपना सोना निकालने के लिए हमें खानें खोद-खोद कर मीलों नीचे नहीं उतरना पड़ता, बल्कि ऊँचे आसमान में चढ़ना पड़ता है।

मास्टर—वाह, वाह नम्बरदार ! क्या बात कही है तुमने, अच्छा, तो, भैया, आज से तुम मुझे भी अपने इस काम में शामिल कर लो।

नम्बरदार—सच कहते हो, काका ?

मास्टर—हाँ, हाँ, भैया ! मैं जो बात कहता हूँ, नाप-तोल कर कहता हूँ।

चौधरी—ठीक है जी।

नम्बरदार—हाँ, मास्टर जी ! तो पहले आपको वह क़सम खानी पड़ेगी, जो हर ताड़-गुड़ बनानेवाले को खानी पड़ती है।

मास्टर—कैसी क़सम ?

नम्बरदार—यही, कि सरकार जो तुम्हें ताड़ का रस निकालने की इज़ाजत देगी, उसका तुम ग़लत फायदा नहीं उठाओगे।

मास्टर—मैं समझा नहीं।

चौधरी—अरे, इतना भी नहीं समझते, मास्टर ? देखो, समुन्दर से अमृत भी निकलता है और ज़हर भी, तुम प्रतिज्ञा करो कि इस समुन्दर से तुम अमृत लोगे, ज़हर नहीं।

मास्टर—हाँ, समझा। हाँ तो भैया, मास्टर, मुझे मंजूर है यह क़सम।

नम्बरदार—ऐसे नहीं, बाकायदा कहो।

मास्टर—तुम कहते चलो, मैं दुहराता चलूँगा।

नम्बरदार—अच्छा, तो कहो।

(नम्बरदार एक-एक वाक्य कहता जाता है और मास्टर दुहराता जाता है।)

मैं प्रतिज्ञा करता हूँ,
कि मैं ताड़-गुड़ उद्योग के प्रति वफ़ादार रहूँगा,
और सरकार ने नशा-बन्दी के जो कानून बनाए हैं,
उनको कामयाबी के साथ लागू करने में मदद दूँगा,
और ताड़-गुड़ कोआपरेटिव के नियमों को मानूँगा।
मैं नशाबन्दी के खिलाफ़ कोई काम नहीं करूँगा।
मैं प्रतिज्ञा करता हूँ,
कि न तो मैं खुद नशा करूँगा और न किसी दूसरे को नशा करने में किसी तरह की मदद दूँगा।
जय हिन्द !

[आकाशवाणी, दिल्ली के सौजन्य से]

डाक के नए टिकट, लिफाफे, पोस्टकार्ड

पहली अप्रैल १९५७ से दशमिक सिक्के चलने शुरू हो जाएँगे। उसी तारीख से डाक-तार विभाग, डाक के ऐसे नए टिकट और लिफाफे, पोस्टकार्ड आदि जारी करना शुरू कर देगा, जो नए पैसों के बदले में दिए जाएँगे। भिन्न-भिन्न मूल्यों के डाक के नए टिकट एक ही डिज़ाइन के रखे गए हैं, ताकि वे जल्दी ही काफी संख्या में छापे जा सकें और ठीक समय पर बिक्री के लिए उपलब्ध हो सकें। इन टिकटों के मूल्य इस प्रकार होंगे: १ नया पैसा २ नए पैसे, ३ नए पैसे, ५ नए पैसे, ६ नए पैसे, १० नए पैसे, १३ नए पैसे, २० नए पैसे, २५ नए पैसे, ५० नए पैसे और ७५ नए पैसे। "सर्विस" टिकट भी, ७५ नए पैसों के अलावा, इन्हीं सब मूल्यों के होंगे।

१ रु०, २ रु०, ५ रु०, १० रु० और १५ रु० के टिकट वही रहेंगे और उनमें कोई परिवर्तन नहीं होगा।

पहली अप्रैल से जो नए लिफाफे, पोस्टकार्ड आदि जारी किए जाएँगे, उनके मूल्य इस प्रकार होंगे : अन्तर्देशीय (सिंगल) पोस्टकार्ड–५ नए पैसे, अन्तर्देशीय (जवाबी) पोस्ट-कार्ड–१० नए पैसे, स्थानीय (सिंगल) पोस्टकार्ड–३ नए पैसे, स्थानीय (जवाबी) पोस्ट कार्ड–६ नए पैसे, मुहर लगा (एम्बोस्ड) वर्गाकार लिफाफा–१३ नए पैसे, अन्तर्देशीय पत्र–१० नए पैसे, रजिस्ट्री का लिफाफा–७३ नए पैसे (१० नए पैसे के स्टेशनरी खर्च सहित), और एयरोग्राम–२० नए पैसे, ५० नए पैसे और ७५ नए पैसे।

आइए, पैदावार बढ़ाने की प्रतिज्ञा करें !

'हमें पैदावार बढ़ाने के लिए खून-पसीना एक करना होगा। अगर हम ऐसा नहीं करते, तो हम अपनी योजना को सफलतापूर्वक पूरा नहीं कर सकेंगे। हमें दो में से एक बात चुननी है—या तो पैदावार बढ़ा कर योजना को सफल बनाएँ या फिर योजना को त्याग दें। कोई और रास्ता नहीं है...' यह घोषणा प्रधान मन्त्री, श्री जवाहरलाल नेहरू ने कुछ दिन पहले की थी। इससे यह सिद्ध होता है कि यद्यपि हम एक योजना पूरी करके दूसरी शुरू कर चुके हैं, लेकिन अब भी कृषि ही हमारे देश की उन्नति का मुख्य साधन है।

युद्ध, देश-विभाजन तथा बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपत्तियों के बाद पंचवर्षीय योजना शुरू की गई थी, जिसने हमारी राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था को मज़बूत बनाया। इतना ही नहीं, इसने दूसरी योजना के अन्तर्गत कृषि तथा अन्य क्षेत्रों के विकास के विस्तृत कार्यक्रम की बुनियाद रखी। १९४७-४८ से १९५१-५२ तक की अवधि में अनाज की सालाना उपज औसतन ५ करोड़ १८ लाख टन रही थी, लेकिन १९५२-५३ से १९५५-५६ तक उपज की सालाना औसत बढ़कर ६ करोड़ ४२ लाख ८० हजार टन हो गई। शुरू में दूसरी योजना में कृषि-उपज का जो लक्ष्य रखा गया था,

वह १९५६ के अन्त में और भी बढ़ा दिया गया। इससे यह सिद्ध होता है कि कृषि-उपज के मामले में तनिक भी ढील नहीं दी जा रही है।

पहली योजना के अन्तिम वर्ष की उपज की तुलना में नए लक्ष्यों द्वारा २७ प्रतिशत वृद्धि की जाएगी, जब कि पहले १७ प्रतिशत वृद्धि के लक्ष्य रखे गए थे। इस प्रकार संशोधित लक्ष्य पूरे होने पर अनाज की उपज में १ करोड़ ५५ लाख टन या पहले लक्ष्य की उपेक्षा ५५ लाख टन की वृद्धि होगी।

उपज बढ़ाने के तरीके

पहली योजना के समान ही दूसरी योजना में भी यद्यपि खेती के अच्छे तरीके अपना कर उपज बढ़ानी है, लेकिन साथ ही इसमें कृषि के अन्य क्षेत्रों का भी विकास करना है, जैसे पशु-धन का विकास, ग्राम-सुधार आदि। कृषि उपज बढ़ाने के लिए जो बातें सबसे ज़रूरी है, वे ये हैं—सिंचाई की अच्छी सुविधाएँ उपलब्ध कराना, खाद और उर्वरकों का ज्यादा इस्तेमाल करना, अच्छे बीजों को उपयोग में लाना और धान की खेती में बड़े पैमाने पर जापानी तरीका अपनाना।

आशा है कि दूसरी योजना में २ करोड़ १० लाख एकड़ ज्यादा ज़मीन की सिंचाई होने लगेगी—एक करोड़ २० लाख एकड़ ज़मीन में बड़ी और मझौली सिंचाई योजनाओं से और ९० लाख एकड़ में छोटी योजनाओं से। नत्रजन-युक्त उर्वरकों की खपत ६ लाख टन से बढ़ा कर १८ लाख टन तक पहुँचाई जाएगी। हरी खाद और कूड़े-करकट की खाद का उपयोग बढ़ाया जाएगा। आशा है कि कृषि मन्त्रालय की तीन योजनाएँ कृषि-उपज बढ़ाने में बहुत सहायक सिद्ध होंगी। इन योजनाओं का उद्देश्य गाँवों में खाद तैयार करने को प्रोत्साहन देना, ग्राम-पंचायतों के इलाकों में कूड़े की खाद तैयार करना और हरी खाद का इस्तेमाल बढ़ाना है।

ज्यादा परिमाण में बढ़िया बीज उपलब्ध करने के लिए एक विस्तृत योजना बनाई गई है, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक विकास खण्ड में २५ एकड़ का एक-एक फारम खोला जाएगा। अनुमान है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक इस तरह के ४,२८० से भी अधिक फारम खुल जाएँगे।

१९५५-५६ में २० लाख एकड़ ज़मीन में जापानी तरीके से धान की खेती होती थी। १९६०-६१ के अन्त तक इस तरह की खेती का क्षेत्रफल ८० लाख एकड़ तक पहुँचा देने का विचार है। इससे लगभग २० लाख टन धान या १३ लाख ३० हजार टन चावल अधिक पैदा होगा।

कृषि-क्षेत्र का विस्तार

अधिक ज़मीन में खेती करने के लिए जो योजनाएँ बनाई गई हैं, उनके अन्तर्गत भूमि-सुधार और भू-रक्षण के विस्तृत कार्यक्रम हैं। केन्द्रीय तथा राज्यीय ट्रैक्टर संगठनों, किसानों तथा अन्य लोगों की सहायता से १५ लाख एकड़ ज़मीन का सुधार किया जाएगा और २० लाख एकड़ ज़मीन की उर्वरा-शक्ति बढ़ाई जाएगी। पौध-रक्षण का काम भी बढ़ेगा।

भू-रक्षण के सुसंगठित कार्य द्वारा ३० लाख एकड़ से भी अधिक ज़मीन को खेती के योग्य बनाया जाएगा, जो इस समय भूमि के कटाव की वजह से बेकार हो जाती है।

दूसरी योजना में कृषि-उपज बढ़ाने के अलावा पशु-पालन, दुग्धशाला-उद्योग, वन-रक्षण, मछली पालन तथा सहकार के विकास के लिए भी व्यवस्था की गई है।

वैज्ञानिक तरीकों से पशुओं की नस्ल सुधारने, रोग-नियन्त्रण करने आदि के लिए पहली योजना में जो मुख्य ग्राम-योजना चलाई गई थी, दूसरी योजना में उसका विस्तार किया जाएगा। भारत में यद्यपि पशुओं की संख्या काफ़ी है, लेकिन उसके मुकाबले दूध की उपलब्धि बहुत कम है। दूध की उपलब्धि में अगले १०-१२ वर्षों में ३० से ४० प्रतिशत तक वृद्धि करने का लक्ष्य रखा गया है। निकट भविष्य में ही स्थिति सुधारने के लिए शहरों में पशु पालन बस्तियाँ, दुग्धशालाएँ और सहकारी दुग्ध-उत्पादन-केन्द्र खोले जाएँगे। जिन इलाकों में दूध ज्यादा होता है, वहाँ दुग्ध-चूर्ण तैयार करने के कारखाने खोले जाएँगे। योजना के अन्तर्गत शहरों में दूध-वितरण करने की ३६ योजनाएँ चलाई जाएँगी और १२ सहकारी क्रीमशालाएँ (क्रीमरी) और ७ दुग्ध-चूर्ण बनाने के कारखाने खोले जाएँगे।

मुर्गी-पालन के विकास की योजनाओं के अन्तर्गत ४ प्रादेशिक फारम और ३०० विस्तार केन्द्र स्थापित होंगे। अनुमान है कि दूसरी योजना में ३३ प्रतिशत मछली अधिक पकड़ी जाने लगेगी।

किसानों की स्थिति में सुधार

दूसरी पंचवर्षीय योजना में किसानों की स्थिति में सुधार करने के लिए काफी व्यवस्था की गई है। जोत की उच्चतम सीमा निर्धारित करने, चकबन्दी, भू-प्रबन्ध प्रणालियों और सहकारी खेती की तरफ खास ध्यान दिया जाएगा।

गाँववालों के आर्थिक जीवन को सुसंगठित बनाने के लिए ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति की सिफारिशों के अनुसार सहकार आन्दोलन को नया रूप दिया जा रहा है। ऋण, हाट-व्यवस्था,

[शेष पृष्ठ २४ पर]

सामुदायिक विकास और हमारी असफलताएँ

टी० एस० अविनाशलिंगम्

सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं ने जनता को अपनी प्रगति के लिए खुद काम करने के लिए काफ़ी प्रेरणा दी है। खेती के नए-नए तरीके अपनाए गए हैं। पैदावार बढ़ गई है। देहाती इलाकों में अपनी सहायता खुद करने की भावना घर कर रही है। सैंकड़ों की तादाद में स्कूल और दवाखाने बनाए गए हैं। मीलों लम्बी सड़कों का निर्माण हुआ है। इस काम को शुरू हुए पाँच साल हो चुके हैं। यही वह ठीक समय है जब हम पिछले वर्षों की प्रगति पर नज़र डालें और यह देखें कि हमें अपने उद्देश्यों में कहाँ तक सफलता मिली है।

इस लेख में मैं कुछ महत्वपूर्ण बातों का ही उल्लेख करूंगा। हम चाहते हैं कि सामुदायिक विकास-कार्य सच्चे अर्थों में जन-आन्दोलन बन जाए, जिसका नेतृत्व जनता ही करे और जनता ही जिसे प्रेरणा दे। अब तक हमारे सामने अनेक ऐसे उदाहरण हैं जब सरकार ने गाँवों में कई विकास कार्य प्रारम्भ किए, खूब धूमधाम से उनकी शुरुआत हुई पर अन्त में वे सब ठप हो गए। पर जहाँ कहीं ये कार्य जन-आन्दोलन के रूप में शुरू हुए, वहाँ उनकी नींव उत्तरोत्तर मज़बूत होती गई। सवाल यह है कि क्या हमारा सामुदायिक विकास कार्यक्रम भी जन-आन्दोलन है? इसके लिए हमें तथ्यों पर ध्यान देना होगा। इसमें कोई शक नहीं कि जन सहयोग से काफ़ी काम हुआ है। पर सचाई यह है कि आज भी यह कार्यक्रम अधिकतर सरकारी अफ़सरों की देख-रेख में ही चल रहा है। ज़िलाधीश आज भी ज़िला विकास समिति का अध्यक्ष होता है, यद्यपि जनता ने कई बार यह माँग की है कि कोई ग़ैर-सरकारी व्यक्ति इस समिति का अध्यक्ष होना चाहिए। अभी हाल में यह निर्णय किया गया है कि अब ग़ैर-सरकारी व्यक्ति भी जिला विकास समितियों के अध्यक्ष बन सकेंगे। जन साधारण को विकास कार्यों में तभी सम्मिलित किया जाता है और उन्हें तभी प्रोत्साहन दिया जाता है जब उनकी राय जिलाधीश या अन्य छोटे-बड़े अफ़सरों की राय से मिलती है। सरकार अभी तक ज़िले के विकास कार्य का भार ग़ैर-सरकारी हाथों में सौंपने में संकोच करती है। यह इस बात का परिचायक है कि सामुदायिक विकास आन्दोलन अभी तक जन आन्दोलन नहीं बन सका है। निस्सन्देह आज़ादी मिलने के कारण जनता में उत्साह पैदा हुआ है और गाँवों में नए जीवन का संचार हुआ है पर इस बात का अभी तक कोई प्रमाण नहीं मिला कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम जन आन्दोलन बन गया है, वह जनता की प्रेरणा से ही चलता है और उसका नेतृत्व भी जनता के हाथों में है।

अब हम इस आन्दोलन के एक अन्य पहलू पर भी नज़र डालें। सामुदायिक विकास का एकमात्र उद्देश्य जनता का आर्थिक स्तर ऊँचा उठाना नहीं है। हमारा उद्देश्य यह है कि जनसाधारण का जीवन स्तर ऊँचा उठाया जाए, जनता रोगमुक्त हो, उसे पौष्टिक आहार मिले, आसपास का वातावरण स्वच्छ हो तथा जीवन स्तर ऊँचा करने के लिए जिन अन्य चीज़ों की आवश्यकता होती है, वे सभी सुलभ हों। इस बात के लिए पहली और सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि आमदनी बढ़े। पर यही हमारा अन्तिम लक्ष्य नहीं है। हमारा लक्ष्य तो यह है कि जनता में वे सामाजिक और सांस्कृतिक गुण पैदा हों जिनके कारण जीवन, जीवन बन जाता है। अधिक आय होने के बावजूद भी हो सकता है कि लोग गन्दी जगहों में रहें, उनकी आदतें खराब हों, उनका भोजन उचित रूप में पौष्टिक न हो तथा उनका नागरिक जीवन भी उच्च कोटि का न हो। हमारे देश में भी, और बहुत से अन्य देशों में भी कई ऐसे वर्ग हैं जिनके पास धन तो होता है पर जिनका जीवन स्तर ऊँचा नहीं होता। भारत के कुछ औद्योगिक क्षेत्रों में अनेक परिवारों के सदस्यों की मासिक आय ५००-५०० रुपए तक होती है, पर तब भी उनके जीवन स्तर को उत्तम नहीं कहा जा सकता। यदि हम जनता का जीवन सुधारना चाहते हैं, तो सबसे पहले घर का सुधार करना आवश्यक है। विश्व भर में घर ही समाज की सब से छोटी इकाई है। और घर का मतलब है नारी—माँ और गृहिणी के रूप में। पुरुषों के विचार चाहे कितने ऊँचे क्यों न हों, जब तक स्त्रियाँ उन्हें न अपना लें, उन विचारों पर अमल नहीं किया जा सकता। परन्तु यदि स्त्रियों का उन बातों पर विश्वास जम जाए, तब न केवल वे विचार जीवन के अभिन्न अंग बन जाते हैं बल्कि भावी पीढ़ियों पर भी उन विचारों का प्रभाव पड़ता है। इस दिशा में काम ठीक तरह शुरू नहीं हुआ है। आजकल भारत में ग्राम सेविकाओं को प्रशिक्षण देने के लगभग २७ केन्द्र हैं। ग्राम सेविकाओं का पहला दल अपना प्रशिक्षण समाप्त कर चुका है और विभिन्न खण्डों में ग्राम सेविकाओं की नियुक्ति की जा चुकी

है। इन केन्द्रों की अध्यापिकाएं गृह विज्ञान में स्नातिकाएँ हैं। उनमें से बहुत सी पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित हैं, उनका ज्ञान पाश्चात्य ढंग के रहन-सहन की पुस्तकों पर आधारित है और वे उन विदेशी व्यक्तियों से प्रेरणा प्राप्त करती हैं जिनको हमारी महान् संस्कृति और परम्परा का तनिक भी ज्ञान नहीं है। कालेज की पढ़ी-लिखी जिन लड़कियों का पश्चिमी रीति-रिवाजों और तड़क-भड़क के प्रति अधिक आकर्षण है, वे गाँवों में काम करने के लिए अनुपयुक्त हैं। असलियत तो यह है कि देहाती स्त्रियाँ उन्हें पसन्द भी नहीं करतीं। गृह विज्ञान की कई अध्यापिकाएँ अमेरिका और अन्य देशों की सैर कर आई हैं। मैं कई ऐसी अध्यापिकाओं को जानता हूँ जिन्होंने यह काम केवल विदेशों की सैर करने के लिए ही अपनाया है। पर यदि वे अपना काम अच्छी तरह करना चाहती हैं, तो उन्हें अपनी महान् संस्कृति के अनुरूप अपना रहन-सहन और व्यवहार सादा बनाना होगा। उनका जीवन ऐसा होना चाहिए कि वे गाँव में लोकप्रिय बन जाएँ। ये अध्यापिकाएँ गृह विज्ञान कालेजों से भरती की जाती हैं, इसलिए इन कालेजों तथा गृह विज्ञान प्रशिक्षण केन्द्रों में भारतीय संस्कृति और उच्च कोटि के भारतीय साहित्य की शिक्षा दी जानी चाहिए।

एक और बात पर भी मैं ज़ोर देना चाहूँगा। सामुदायिक विकास मन्त्रालय ने जन सहयोग के आँकड़ों की एक लम्बी सूची प्रस्तुत की है। उसमें बताया गया है कि इतने स्कूल खोले गए, इतने मील लम्बी सड़कें बनाई गईं, इतने औषधालयों का उद्घाटन हुआ, इतने मकानों का निर्माण हुआ आदि आदि। इसलिए यह पता लगाना अच्छा रहेगा कि यह जन सहयोग किस रूप में मिला। बताया गया है कि स्थानीय और अन्य कार्यों में जितना कुछ भी जन सहयोग मिला है, उसका बड़ा भाग पंचायतों, ज़िला बोर्डों आदि स्थानीय निकायों की मार्फत मिला है। जन सहयोग के हमारे दो उद्देश्य थे—पहला, जनता सीधे ही विकास कार्यों में सहयोग दे, और दूसरा, जहाँ कहीं सम्भव हो, यह सहयोग श्रम के रूप में हो। दूसरे उद्देश्य को अधिक महत्व दिया गया था क्योंकि हम चाहते हैं कि जनता श्रम के महत्व को समझे और विकास कार्यों के लिए हम अपनी विशाल जनसंख्या का समुचित उपयोग कर सकें। इन आँकड़ों को देखते हुए क्या हम यह कह सकते हैं कि हम अपने इस महत्वपूर्ण उद्देश्य की प्राप्ति में सफल हुए हैं?

मेरे इतना कुछ लिखने का यह मतलब नहीं कि अब तक जितना काम हुआ है, उसे मैं कोई महत्व ही नहीं देता। मैं तो केवल यही चाहता हूँ कि जो कुछ हो रहा है, केवल उस से सन्तोष कर के हम हाथ पर हाथ धर कर न बैठ जाएँ। पिछले सालों में हमें कुछ अनुभव प्राप्त हुआ है। असफलताओं और मार्ग में अनेक कठिनाइयों से हमें कुछ सीख मिली है। मुझे आशा है कि इस अनुभव के कारण हम भविष्य में और अधिक सफलता प्राप्त कर सकेंगे।

★

गाँवों में लोकतन्त्र — [पृष्ठ ३ का शेषांश]

यदि हम स्थानीय निकायों की उपयोगिता की जाँच इस बात से करना चाहें कि वे तुरन्त ही नौकरशाही के समान कुशलता से काम करने लगें या उनसे तुरन्त कोई लाभ हुआ है, तो यह हमारी ग़लती होगी। स्थानीय सरकारें जब लोकतन्त्री तरीके से काम करती हैं, तब उनका जो मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है, वह उपर्युक्त दो बातों से कहीं अधिक मूल्यवान है। लार्ड ब्राइस के शब्दों में—**स्थानीय स्वायत शासन छोटे-छोटे प्रदेशों की जनता में एक स्वतन्त्र देश के नागरिकों के लिए जिन आवश्यक गुणों का निर्माण करता है, उसके बारे में कुछ शब्द कहना उचित होगा। स्थानीय निकाय नागरिकों में सामान्य रुचि के मामलों के प्रति सामूहिक हित की भावना उत्पन्न करते हैं और वे स्थानीय मामलों के प्रशासन को अच्छी तरह एवं ईमानदारी से चलाना व्यक्तिगत एवं सामाजिक कर्तव्य समझते हैं.....स्थानीय निकाय जनसाधारण को न केवल काम करने का प्रशिक्षण देते हैं, बल्कि दूसरों के साथ मिल कर काम करना भी सिखाते हैं। ये जनता में सामान्य बुद्धि, तर्क संगति, निर्णय कुशलता और सामाजिकता आदि भावनाएँ पैदा करते हैं। जनता यहीं ले और दे की नीति समझती है।**

भारत में लोकतन्त्र तब तक सुदृढ़ रूप से विकसित नहीं होगा जब तक गाँववाले स्थानीय प्रशासन में भाग ले कर अपने अन्दर वह गुण पैदा नहीं करते और इस तरह सामाजवाद के पथ पर आगे नहीं बढ़ते। प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने पिछले सितम्बर में एक सन्देश में कहा था—

हमारा उद्देश्य मनुष्यों का निर्माण करना है और वह भी हर दिशा में पहले से अच्छी तरह। हमारी सामुदायिक विकास-योजनाओं का उद्देश्य है जनता में आशा का सचार करना, उनमें आत्म-निर्भरता और आत्मविश्वास की भावना भरना तथा सहकारी ढंग और कठोर परिश्रम द्वारा अपने लक्ष्यों की महत्ता समझाना।

बिना ग्राम पंचायतों के सहयोग के उपर्युक्त लक्ष्य की प्राप्ति कठिन होगी।

हमारी प्रथम ग्राम यात्रा

कामेश्वर प्रसाद चौबे

केन्द्र में कई दिनों से हमें ग्राम यात्रा की बात सुनाई दे रही थी। २१ जनवरी, १९५६ को हमने ग्राम यात्रा का कार्यक्रम नोटिस बोर्ड पर पढ़ा। दूसरे दिन रविवार को दोपहर में आचार्य ने समस्त प्रशिक्षकों एवं प्रशिक्षार्थियों की एक सभा बुलाई। उन्होंने राष्ट्रीय सप्ताह मनाने एवं शिविर लगाने का उद्देश्य बतलाया। उन्होंने कहा—"हम ग्राम में जाकर रचनात्मक कार्य करेंगे और साथ ही इसकी महत्ता ग्रामीणों को बतलाकर ग्राम जीवन का अनुभव भी प्राप्त करेंगे। उनके बीच हमें कोई अजनबी बन कर नहीं, बल्कि हिलमिल कर उनके साथ रहना व कार्य करना है।" इसके बाद उन्होंने शिविर में चार दिन रह कर कार्य करने, खाने-पीने एवं प्रदर्शन के लिए आवश्यक सामान को ले जाने का कार्य-भार, सम्बन्धित प्रशिक्षक एवं प्रशिक्षार्थियों को सौंप दिया। अन्त में आचार्य ने आशा प्रकट की—"हम अपने शुभ कार्यों एवं व्यवहार से ग्रामीणों के बीच एक आदर्श प्रस्तुत कर केन्द्र की प्रतिष्ठा बढ़ाएँगे।

दूसरे दिन सोमवार को भोजन के बाद हम लोगों ने अपने आवश्यक सामान को ले जाने के लिए प्रबन्ध किया। भारी और बड़ी चीज़ें बैलगाड़ियों में भर कर भेज दी गईं। तदुपरान्त दो बजे सभी लोग कार्यालय के बाहर एकत्रित हुए। आचार्य ने वहाँ पहुँचने और रहने के बारे में कुछ हिदायतें दीं। फिर समस्त प्रशिक्षार्थी नई आशा के साथ टेकारी ग्राम शिविर में नया अनुभव प्राप्त करने चल पड़े।

छः मील चलकर हम शाम को लगभग ४ बजे टेकारी गाँव पहुँचे। सामान ग्राम की प्राथमिक शाला में रखा गया। हम लोग लगभग सौ की संख्या में थे। अतः उस छोटी-सी शाला में सब को जगह मिलना सम्भव नहीं था। इसलिए आधे लोगों के रहने के लिए ग्राम-मन्दिर में व्यवस्था की गई थी। किन्तु यहाँ पर भी जगह की अत्यन्त कमी थी, जिसके कारण कुछ प्रशिक्षार्थी पास के खलिहानों में चले गए। खलिहानों की प्रत्येक झोंपड़ी में प्रशिक्षार्थियों का दल और रखवाले किसान भाई सोते थे।

सायंकाल ७ बजे सब लोग शाला के सामने एकत्रित हुए। अगले दिवस के कार्यक्रम पर आचार्य ने प्रकाश डाला। इसके बाद ९ बजे बाहर के ही आंगन में बैठ कर सब ने एक साथ भोजन किया। इन दिनों ठण्ड भी पड़ रही थी। खाना खा कर हम लोग सो गए। हालाँकि भूमि पर सोने के लिए सभी को धान की पुआल मिल गई थी, किन्तु खुला स्थान होने के कारण ठण्डी हवा और भी ज्यादा तीखी लगती थी, फिर भी थके होने के कारण सब को अच्छी नींद आई।

दूसरे दिन मंगलवार को ब्रह्ममुहूर्त में घण्टी बजी। नित्य कर्म से निवृत होकर सबने ६ बजे प्रार्थना की। आचार्य ने ग्राम सफाई के बारे में सब को समझाया। अलग-अलग छोटे-छोटे दल बना कर हम लोगों ने ग्राम की गलियों में झाड़ू, टोकरियाँ और फावड़े लेकर सफाई की। गलियों में जहाँ कि मिट्टी कट गई थी, दूर-दूर से मिट्टी लाकर वहाँ भरी। यह सब देख कर गाँववाले अपने-अपने घरों के दरवाजों पर ही खड़े-खड़े आपस में कानाफूसी करने लगे। एक वृद्ध हम लोगों के पास आकर अपनी बोली में बोला—"कस गा बाबू हो, तुमनला सरकाने ने भेजल है का?"

हमने कहा—"भाई हो, हम ग्राम सेवक विद्यार्थी हैं और गाँव की सेवा कैसे करें यह सीखने आए हैं।"

हमारी बातों को सुनकर वृद्ध वहाँ बड़ी देर तक खड़ा देखता रहा और बाद में उसने जाकर गाँव वालों को बतलाया। फिर हमारे बिना कहे ही गाँववाले हमारी मदद के लिए आ गए। ८ बजे तक सफाई का कार्य चलता रहा। इसके बाद शाला के प्रांगण में हाथ-पैर धो कर सब ने जलपान किया। पुनः ९ बजे हम मन्दिर एवं तालाब के पास सड़क निर्माण के लिए कन्धों पर गेंती, फावड़ा और हाथों में घमेले सम्हाले गीत गाते गए। पहले से ही वहाँ सड़क बनने की जगह रस्सियाँ तान दी गई थीं। आचार्य ने मिट्टी काटने और सड़क पर पाटने के लिए आवश्यक बातें बताईं। फिर सभी प्रशिक्षार्थी एवं प्रशिक्षकगण जी-जान से निर्माण कार्य में जुट गए। किन्तु यह कार्य उतना आसान नहीं था। ज़ोर से चलाने पर भी गेंती की नोंक ज़मीन में मुश्किल से दो-तीन इंच घुस पाती थी। ज़मीन सख्त थी, इसलिए गाँववालों ने उस पत्थर को कभी खोदा भी नहीं था। दूर खड़े गाँववाले अपने-अपने घरों से हमें देख-देख कर हँस रहे थे। कभी उनकी आवाज़ सुनाई देती—'ये बाबू मन भी हम मन कस उदाती चलावत सीखत है।" लगभग घण्टे भर बाद गाँव के कुछ लोग हमारी लगन देख कर आचार्य से मिले। आचार्य ने उन्हें रचनात्मक कार्य का महत्व भली भाँति बतलाया। फिर सहयोग के लिए भी कहा। अपना कार्य समझ कर कुछ ग्रामीण वहाँ आए। कुछ तो अपने साथ छोटे-छोटे फावड़े भी ले आए थे। किन्तु उन

हल्के और छोटे फावड़ों का क्या उपयोग हो सकता था। उन्होंने हमारे गेंती फावड़े से काम करना शुरू किया। उस समय हमें यह अनुभव हुआ कि ये ग्रामीण भाई किसी से जल्दी हिलते-मिलते नहीं हैं। पर यदि उनके साथ घुलमिल कर रहा जाए, उनकी इच्छाओं एवं विचारों का आदर किया जाए तो उनके साथ कार्य किया जा सकता है। १२ बजे तक कार्य करने के पश्चात औज़ारों एवं सामानों को नियत स्थान पर रख स्नान एवं भोजन किया। दो बजे के बाद मन्दिर में प्रशिक्षार्थियों द्वारा ८ बजे तक खेती और स्वास्थ्य सम्बन्धी प्रदर्शन होता रहा। धीरे-धीरे इसमें बहुत से गाँववाले आए। स्थानीय छत्तीस गढ़ी भाषा ही हमारे बोलने का माध्यम थी। इस प्रदर्शन में कई ग्रामीणों से हमारी अच्छी जान-पहचान हो गई। ग्रामीणों ने कम्पोस्ट खाद, जापानी पद्धति से धान की तिगुनी फसल और मलेरिया के बारे में बड़े ही ध्यान से सुना और आश्चर्य भी प्रकट किया। उनमें से कुछ ने प्रयोगशाला में आकर स्वयं सब कुछ देखने की इच्छा भी प्रकट की।

पाँच बजे शाला के पास के मैदान में कबड्डी के खेल की जगह सैंकड़ों गाँववालों ने दिलचस्पी दिखाई। इससे यह जान पड़ा कि गाँवों में यह खेल कितना लोकप्रिय है। सायंकाल डाक्टर साहब ने ग्रामीणों को मलेरिया, दाद, खुजली एवं घावों की दवाइयाँ भी बाँटी। रात्रि में ६ से ११ बजे तक मन्दिर में रामायण, संगीत एवं नृत्य हुआ। इसमें भी गाँववाले बड़ी संख्या में आए और उन्होंने भी अपने कुछ कार्यक्रम दिखाए। सब लोगों को अगले दिन का कार्यक्रम बतलाया गया और हमारे आने का उद्देश्य भी समझाया गया।

दूसरे दिन नियमानुसार हम प्रातः सफाई कार्य में जुटे और आज सफ़ाई के अतिरिक्त दो कुँओं के पास सोख्ते गड्ढे भी बनाए। इसके बाद गाँववालों को इन गड्ढों की उपयोगिता बतलाई गई। उन लोगों ने हमारी बातों को बड़े ध्यान से सुना। उनमें से एक ने कहा—"अइसन बनये ले हमर कुआ के तीर में न चिखला होही न बसाही।" इस कार्य में आज हमें उन लोगों ने बहुत मदद दी।

सफ़ाई एवं जलपान के पश्चात हम लोग पुनः सड़क निर्माण में जुट गए। आज ४ फर्लांग का लक्ष्य पूरा करना था।

ज़ोर-शोर से कार्य आरम्भ हुआ। आज ग्रामवासियों ने भी सहायता दी। लगभग साढ़े बारह बजे ४ फर्लांग सड़क बन कर तैयार हो गई। इस तरह बस्ती के मन्दिर व तालाब से शाला तक ४ फर्लांग की सड़क का कठिन कार्य सम्पन्न हो गया। आचार्य के सम्मुख उपस्थित ग्रामीणों में से एक वृद्ध ने कहा—"तोहार मन के दया माया से हमन की सड़क बन गईस।" इस तरह हमारे कुछ घण्टों के परिश्रम से उनकी सड़क सुधर गई।

स्नान एवं भोजनोपरान्त पुनः २ बजे से ३ बजे तक मन्दिर में खेती, स्वास्थ्य एवं सुधरे औज़ारों का प्रदर्शन किया गया और उनकी उपयोगिता बतलाई गई। आज बहुत अधिक संख्या में ग्रामीण शरीक हुए। इसके बाद गाँव के घर-घर में जाकर ग्रामीणों से परिचय प्राप्त करने एवं उनकी समस्याओं को समझने के लिए दो दो की टोली में हम लोग बँट गए। शाम को सब ने आचार्य को अपने-अपने अनुभव लिखकर दिए तथा सुनाए। इस निकट सम्पर्क से हमने उनकी कई बातें व समस्याएँ मालूम कीं। सायंकाल पुनः कबड्डी का खेल हुआ। गाँववालों ने भी अपना दल बना कर इसमें भाग लिया। अब तो ग्रामवासी साथ नहीं छोड़ते थे। रात्रि को मन्दिर के मैदान में खेती, स्वास्थ्य एवं बीमारियों के सम्बन्ध में सिनेमा स्लाइड्स दिखलाए गए। नृत्य, संगीत एवं वाद्य वादन तथा प्रहसन का कार्यक्रम बड़ी रात तक चलता रहा। हालाँकि हम लोग थके हुए थे, सोने की भी इच्छा हो रही थी, फिर भी ग्रामवासियों के प्रेमपूर्ण आग्रह व उनके सहयोग के कारण कार्यक्रम १२ बजे तक चलता रहा। गाँव में शायद ही कोई व्यक्ति होगा जो आज यहाँ न आया हो। इस कार्यक्रम के बीच हमने अगले दिन २६ जनवरी का महत्व बता कर अपना कार्यक्रम बताया।

दूसरे दिन प्रातः हमने राष्ट्र गान गाते हुए ग्राम की गलियों में प्रभात फेरी लगाई। "जन-गण-मन" का गायन हुआ और ग्रामवासियों के अनुरोध पर आचार्य ने राष्ट्रीय झण्डा फहराया। इस समय उच्च ध्वनि से "स्वतन्त्रता अमर हो" का नारा लगाया गया।

अब हमारा यहाँ का कार्यक्रम पूर्ण हो गया था और हम अपने केन्द्र चन्दखुरी में लौटना चाहते थे। पर ग्रामवासियों के प्रेमपूर्ण आग्रह ने हमें घण्टे भर तक रोके रखा। उन लोगों ने हमें अल्पाहार कराया और बाद में उनके मुखिया ने करबद्ध हो विदाई देते हुए कहा—"हमन तुमन ला आगहू नहीं जानत रहेन। अउ कहुं जानत रहतेन तो तू मन ला कवनो किसिम के तकलीफ नहीं होवन देते। अउर तोहरे संग मिल जुल के काम करतेन। एहर हमर बड़ा भाग है ए जवन तू मन आके हमर मन बर सड़क, कुआ ला बनायो।"

एक विचित्र प्रकार का शान्त एवं गम्भीर वातावरण पैदा हो गया था।

इसके बाद हम ग्रामीण भाइयों से "जोहार" कर केन्द्र की ओर लौट पड़े।

★

सौराष्ट्र का गडरिया

[फोटो : एन० पी० वोरा]

अन्नपूर्णा !
फोटो : विद्याव्रत

ी बेटी
• एल• सैयद

मेरी लखनऊ यात्रा

पी० दास

[सामुदायिक विकास मन्त्रालय की समाज शिक्षा (महिला) विशेष अधिकारी डा० (कुमारी) पी० दास ने २० से ३० सितम्बर १९५६ तक उत्तर प्रदेश का दौरा किया। उसका वर्णन उन्हीं के शब्दों में पढ़िए।]

सरोजिनी नगर की गृह विज्ञान शाखा

उत्तर प्रदेश के समाज कल्याण निर्देशालय की देख-रेख में काम करनेवाली यह शाखा हाल में ही अपने नए भवन में चली गई है। यद्यपि इस भवन के चारों ओर खुले मैदान हैं, तो भी यहाँ के कर्मचारियों के रहने के लिए भवन में पर्याप्त जगह नहीं है।

शाखा की मुख्य शिक्षिका बीमारी के कारण लम्बी छुट्टी पर थीं। बाकी दो में से एक बिलकुल नई है। इसलिए अपर्याप्त शिक्षिकाओं के कारण काम में काफ़ी हर्ज हो रहा है।

यहाँ पर जो २० महिलाएँ काम सीख रही हैं। उनमें से अधिकांश मैट्रिक या इण्टर तक पढ़ी हैं। उनमें से कुछ स्कूल या कालेज में भी गृह विज्ञान सीख चुकी हैं। जब मैंने उनसे पूछा कि वे ग्राम सेविका क्यों बनना चाहती हैं, तो केवल दो ही निश्चित उत्तर दे सकीं कि वे गाँवों में काम करने की इच्छुक हैं।

विचार-विमर्श में कई अच्छे प्रश्न पूछे गए। कुछ सुझाव दे कर मै उनसे विदा हुई।

साक्षरता भवन, आलम बाज़ार

इस केन्द्र के कार्यकर्ता बहुत उत्साही हैं। यहाँ के प्रशासक श्री शा ने मुझे नवसाक्षरों के लिए कुछ उत्तम पुस्तकें दिखाईं। उन्होंने मुझे वह तरीका भी बताया जिससे वे विभिन्न केन्द्रों द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की उपयोगिता की जाँच करते हैं। यहाँ दृश्य-श्रव्य शिक्षा प्रणाली के कुछ बहुत अच्छे तरीके भी सिखाए जाते हैं।

यहाँ पर प्राइमरी स्कूलों की २० अध्यापिकाएँ थीं। उन्हें उत्तर प्रदेश की एक प्रादेशिक महिला निरीक्षक ने वयस्क साक्षरता कार्य के बारे में एक महीने के प्रशिक्षण के लिए भेजा था। ऐसे दल यहाँ आते रहते हैं। यह एक अच्छा विचार है। पर मुझे यह पता न लग सका कि यह प्रशिक्षण उन्हें किस उद्देश्य से दिया जाता है।

यहाँ के अध्यापक वर्ग में स्त्री केवल एक है। उसके ज़िम्मे उन महिला प्रशिक्षार्थियों की देखभाल का काम है, जिन्होंने पास के दो गाँवों में एक नया कार्यक्रम शुरू किया है।

मैं इन दोनों गाँवों में गई। इनमें से एक तो करीब-करीब भवन के सामने ही है दूसरा एक या दो मील दूर है। यहाँ पर अधिकतर स्त्रियों के पति खेतों में काम करते हैं, पर कुछ स्त्रियों के पति चमार हैं या रेलवे में नौकरी करते हैं या सड़क कूटने का काम करते हैं। दिन में साढ़े बारह से ढाई बजे तक, जब उन्हें चौके-चूल्हे के बाद फ़ुरसत होती है, वे ३ से ८ के दलों में किसी पड़ौसी के यहाँ इकट्ठी हो जाती हैं। महिला प्रशिक्षार्थी उन्हें कुछ बुनाई, सिलाई आदि सिखाती है, कुछ स्वास्थ्य के बारे में बताती हैं और थोड़ा बहुत पढ़ाती है। जब मैंने उन स्त्रियों से पूछा कि वे क्यों पढ़ना-लिखना सीखना चाहती हैं, तो उन्होंने बताया कि वे चिट्ठी-पत्री पढ़ने, थोड़ा-बहुत हिसाब समझने और खाली वक्त काटने के लिए पढ़ना चाहती हैं। उनमें से अधिकतर भजन और रामायण पढ़ना पसन्द करती हैं। जो गाँव भवन के सामने है, उसमें करीब-करीब सभी हरिजन रहते हैं। उनके गाँव में पहली बार इस तरह का कोई कार्यक्रम चलाया जा रहा है। इसलिए वे इस योजना के प्रति अत्यन्त उत्सुक हैं। मुझे बताया गया कि यह योजना एक परीक्षण के तौर पर चलाई जा रही है। कार्यक्रम केवल महिलाओं के बीच चलाया जाता है, पुरुषों में जानबूझ कर नहीं चलाया जा रहा है। देखना यह है कि महिलाओं के एक बार जागरूक हो जाने से गाँव पर उसका क्या प्रभाव पड़ता है।

अर्जुनपुर

उत्तर प्रदेश की समाज कल्याण उपनिर्देशिका के साथ मैं इस गाँव का बालवाड़ी केन्द्र देखने गई। वहाँ पर २॥ से ६ बरस की अवस्था के लगभग २० बच्चे थे। वे एक छोटे से कमरे में बैठे थे और उनके हाथ में एक-एक स्लेट थी। हावभाव के नाम पर उन्होंने मामूली हाथ हिलाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं किया। बालवाड़ी का मकान गाँव के मुखिया ने दान में दिया है। घर साफ़-सुथरा था। तीसरे पहर यहाँ महिलाएँ एकत्र होती हैं। मकान के बाहर जो छोटा-सा बगीचा है, बच्चे और महिलाएँ उसकी देखभाल करते हैं। यहाँ की ग्राम सेविका बड़ी आयु की थी और उत्साह की भी उसमें कमी थी। जब मैंने

उससे पूछा कि क्या खेलने के लिए बच्चों को बाहर भी ले जाया जाता है, तो उसने जवाब दिया—"कभी-कभी"। ग्राम सेविका के एक लड़के की हाल में ही मृत्यु हो गई थी। इस कारण वह कुछ खिन्न-सी रहती थी। मेरी राय में फिलहाल वहाँ कोई दूसरी स्त्री इंचार्ज़ बना दी जाती, तो अच्छा रहता।

डिगोई

उपनिर्देशिका के साथ मैंने इस गाँव का महिला केन्द्र भी देखा। सुबह बालवाड़ी लगती है। तीसरे पहर ११ से १६ बरस की लगभग १५ लड़कियाँ मामूली दस्तकारी और पढ़ना-लिखना सीखने आती हैं। जब मैंने पूछा कि क्या उनको स्वास्थ्य या घरेलू कामकाज के बारे में भी कुछ सिखाया जाता है, तो उसने बड़ी मरियल आवाज़ में उत्तर दिया—"हाँ!"

बड़ी उम्र की औरतें केवल रामायण पढ़ने आती हैं। स्त्रियों को बुलाने ग्राम सेविका घर-घर में जाती है। कई बार ४-५ स्त्रियाँ इकट्ठी हो जाती हैं, पर उन्हें इकट्ठा करना बड़ा कठिन है। ३० से ३५ बरस की उम्र की स्त्रियाँ पढ़ना-लिखना सीखना चाहती हैं, पर उनकी अधिक रुचि दस्तकारियों में है। वृद्ध महिलाओं की रुचि तो पढ़ने-लिखने में बिलकुल नहीं है।

शाम को मैंने एफ० ए० ओ० (अन्तर्राष्ट्रीय खाद्य एवं कृषि संगठन) की कुमारी गेलडन्स से बातचीत की। वह वहाँ उत्तर प्रदेश सरकार को गृह विज्ञान के बारे में परामर्श देने आई हुई हैं। उनकी राय थी कि (१) महिलाओं के काम के कार्यक्रम अपेक्षाकृत अरोचक हैं, (२) बालवाड़ी के अध्यापक-अध्यापिकाओं को ठीक से प्रशिक्षण नहीं मिला, और (३) समाज कल्याण गृह विज्ञान प्रशिक्षण का पाठ्यक्रम व्यावहारिक होने की अपेक्षा सैद्धान्तिक अधिक है।

इस सम्बन्ध में मैंने उत्तर प्रदेश के विकास आयुक्त से भी बात की। मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि वह महिलाओं में कार्यक्रम चलाने में विशेष रुचि लेते थे और उसे और ज़ोर से चलाना चाहते थे। वह समाज कल्याण निर्देशालय और सामुदायिक विकास-योजनाओं में अधिक से अधिक सामंजस्य स्थापित करने की चेष्टा कर रहे थे। यह बात काफ़ी आशाजनक है।

कमला नेहरू विद्यालय

लखनऊ के बाद इलाहाबाद ज़िले की यात्रा मैंने २५ से २६ सितम्बर तक की। सब से पहले मैं उत्तर प्रदेश समाज कल्याण निर्देशालय की ज़िला संगठनक श्रीमती तिवारी के साथ कमला नेहरू विद्यालय देखने गई। यहाँ पर सब जातियों और सम्प्रदायों की १६ से ३५ वर्ष की उम्र की ६० से भी अधिक स्त्रियाँ हैं। इनमें से अधिकतर या तो वृद्धा हैं या परित्यक्ता। ६ महीने से लेकर ६-७ वर्ष तक की अवस्था के करीब ३० बच्चे भी यहाँ रहते हैं। बहुत छोटे बच्चों के लिए यहाँ एक शिशुगृह है और बड़े बच्चों के लिए बालवाड़ी। संगीत और दस्तकारी विभाग के अतिरिक्त वहाँ एक चरखा क्लास लगती है तथा आठवीं श्रेणी तक पढ़ाई की भी व्यवस्था है। दस्तकारी विभाग में दर्ज़ी का काम और खिलौने बनाना सिखाया जाता है। वयस्कों के लिए साक्षरता तथा स्वास्थ्य, रसोई, बागबानी और कृषि, शारीरिक शिक्षा, खेलकूद और नागरिक शिक्षा आदि विषय अनिवार्य हैं।

खिलौने बनाना सिखानेवाले अध्यापक अत्यन्त उत्साही हैं। उन्होंने मुझे बताया कि हम प्लाईवुड के खिलौने बनाते हैं। उन्हें मशीन से काटा जाता है। रंग-रौग़न करने के बाद वे औद्योगिक विभाग को भेज दिए जाते हैं, जो उनकी बिक्री की व्यवस्था करता है। पर मुझे इसमें सन्देह है कि यह काम सीखने के बाद औरतें अपनी आजीविका चलाने में समर्थ होंगी। यदि इन खिलौनों की बिक्री का भी प्रबन्ध हो जाए, तो मुझे इसमें सन्देह है कि इन औरतों के पास मशीनें खरीदने योग्य पैसा होगा। असल में तो वे कारखाने के उन श्रमिकों की भाँति काम कर रही थीं, जहाँ सामान को जोड़ कर बनाया जाता है और जहाँ हर कदम पर निरीक्षक उन्हें बताता रहता है। वे औरतें निर्देशक के निर्देशों पर अमल भर करती जा रही थीं, स्वयं अपनी बुद्धि से काम लेने का प्रश्न ही नहीं था।

मुझे बताया गया कि इस संस्था का उद्देश्य यह है कि औरतों को यहाँ पर ऐसी शिक्षा दी जाए जिससे संस्था छोड़ने के बाद वे अपने पैरों पर खड़ी हो सकें। मेरी समझ में नहीं आया कि सिवाय उनके, जो यहाँ आठवीं कक्षा तक पढ़ती हैं या कताई सीखती हैं, बाकी औरतों को किस धन्धे का प्रशिक्षण दिया जा रहा है जिससे वे अपने पैरों पर खड़ी हो सकें।

मैंने वहाँ एक ऐसी औरत देखी जिसे काफ़ी बढ़ा हुआ तपेदिक था। सुपरिण्टेण्डेण्ट उसे सैनिटोरियम में भेजने का अथक प्रयत्न कर रहा था। पर क्या यह अच्छा न हो कि यहाँ भर्ती करने से पहले सब की डाक्टरी जाँच कर ली जाए। केन्द्र के पास ही एक औषधालय है जहाँ मामूली इलाज की व्यवस्था है।

यह संस्था बहुत अच्छा काम कर रही है। इसकी व्यवस्था भी बहुत अच्छी है। क्योंकि यहाँ काफ़ी जगह है और विभिन्न जगहों से इसे सहायता भी मिलती है, इसलिए इसके विस्तार की काफ़ी गुंजाइश है। क्या यह सम्भव नहीं है कि इनमें से कुछ महिलाओं को ग्राम सेविकाओं के रूप में प्रशिक्षित किया जाए?

कृषि संस्थान में समाज शिक्षा संगठनकों का प्रशिक्षण केन्द्र

यहाँ पर ६५ पुरुष और १७ महिला प्रशिक्षार्थी हैं। अध्या-

पकों में केवल एक ही महिला है जो कला और दस्तकारी की शिक्षिका है। वही महिलाओं के होस्टल की वार्डन भी है। पहले यहाँ एक अन्य महिला शिक्षिका भी थीं जो सात सप्ताह पूर्व अचानक ही काम छोड़ कर चली गई।

महिला प्रशिक्षार्थियों में से दो को शिक्षण कार्य का डिप्लोमा प्राप्त है। २ मैट्रिक पास नहीं हैं, बाकी सब इण्टर या बी० ए० पास हैं। सात शादीशुदा हैं। सबकी उम्र १८ से ३२ वर्ष के बीच है।

जब मैंने पूछा कि उन्होंने यह काम क्यों चुना, तो तीन या चार ने बताया कि उनके पति देहाती क्षेत्रों में काम कर रहे हैं। तीन ने उत्तर दिया कि वे गाँव में अपनी बहनों की सहायता करना चाहती हैं। कुछ ने बताया कि उनके दफ्तर ने उन्हें यहाँ भेजा है। शेष कुछ निश्चित उत्तर न दे सकीं। उनमें से जो ग्राम सेविका के रूप में काम कर रही हैं, उन्होंने कुछ कठिनाइयाँ बताईं—जैसे रात्रि के समय दूसरे स्थानों में ठहरने की व्यवस्था, परिवहन, सुरक्षा (चपरासी की व्यवस्था) और सफ़ाई की सुविधाएँ आदि। उन्होंने आशा प्रकट की कि जब वे समाज शिक्षा संगठकों के रूप में वापस जाएँगी तो पहले से अधिक अच्छी तरह काम कर सकेंगी। दो महिलाएँ ऐसी थीं जो इस खण्ड में इसलिए आई थीं कि उनके पति इसी खण्ड में काम करते थे, पर अब उनका तबादला होने वाला था और इस कारण वे काफ़ी खिन्न थीं।

मेरे विचार में यह बहुत ज़रूरी है कि इन अध्यापक-अध्यापिकाओं में कम से कम एक परिपक्व बुद्धि वाली और योग्य अध्यापिका होनी चाहिए जो न केवल महिलाओं की देखभाल करे और उन्हें निर्देश दे, बल्कि अपनी एक सहायिका के साथ गाँवों में भी उनके काम का निरीक्षण करे।

मैंने यह अनुभव किया कि कई बार वहाँ होस्टल में भी और कक्षाओं में भी ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है जब महिलाओं को निश्चित रूप से ही महिला शिक्षिका की आवश्यकता पड़ती है। मैंने इस सम्बन्ध में अवैतनिक निर्देशक श्री शा और उपनिर्देशक डा० ब्रह्मचारी से बातचीत की। डा० ब्रह्मचारी ने बताया कि यदि कोई महिला शिक्षिका मिलेगी तो वे उसे तुरन्त रख लेंगे। यह काम तुरन्त किया जाना चाहिए।

समाज शिक्षा संगठक (महिला) प्रशिक्षार्थियों का होस्टल

होस्टल का भवन एक निर्जन जगह में बना हुआ है और २० औरतों के लिए यह बिलकुल अनुपयुक्त है। हवा का कोई अच्छा प्रबन्ध नहीं है। न तो यहाँ भोजन करने की कोई जगह है और न ही पढ़ने की। दर्शकों के लिए भी कोई व्यवस्था नहीं है। सफ़ाई का प्रबन्ध सन्तोषजनक नहीं, बिजली है ही नहीं। रात में केवल एक चौकीदार रहता है। रात को संकट के समय पुरुष प्रशिक्षार्थियों के होस्टल से किसी को बुलाने के लिए या तो चौकीदार को, या स्वयं महिला वार्डन को जाना पड़ता है। यह होस्टल महिला होस्टल से कुछ फर्लांग दूर है। यह व्यवस्था अत्यन्त असन्तोषजनक है और वार्डन के पास न तो कोई सन्देशवाहक है और न ही टेलीफोन।

महिला प्रशिक्षार्थियों ने मुझे बताया कि उन्हें भी पुरुषों के बराबर दो घण्टे शारीरिक श्रम करना पड़ता है और इसके बाद पी० टी० में सम्मिलित होना पड़ता है। इससे उन पर भारी दबाव पड़ता है। तीन औरतें गर्भवती थीं। उपनिर्देशक महोदय से मैंने कहा कि उनसे भारी काम लेने से पहले, और विशेष कर बस पर लम्बी यात्रा पर भेजने से पहले, डाक्टरी सलाह ली जाए। होस्टल में रहने वाली महिलाओं के लिए डाक्टरी सहायता की व्यवस्था होनी चाहिए।

एक दिन शाम को पुरुष और महिला प्रशिक्षार्थियों ने एक सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया जो काफ़ी अच्छा था। पर उसमें कुछ चुने हुए व्यक्तियों ने ही भाग लिया। मैंने उन्हें बताया कि ऐसे कार्यक्रमों में लगभग सभी प्रशिक्षार्थियों को भाग लेना चाहिए। साथ ही गाँववालों को भी स्वयं ऐसे कार्यक्रम आयोजित करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

मैं महिला प्रशिक्षार्थियों के साथ तीन गाँवों में गई। मैंने अनुभव किया कि उन्हें और अधिक निर्देश देने और सिखाने की आवश्यकता है। उन्होंने मुझे बताया कि वे यहाँ पर प्रेक्षक के नाते आती हैं। पर उन्हें यह पता नहीं कि कैसे और क्या देखा जाए। उन्हें सुनियोजित ढंग से कोई कार्यक्रम चलाने का कुछ ज्ञान नहीं। केवल एक ही अध्यापिका होने के कारण उनके काम की देखभाल भी नहीं हो पाती। मुझे मालूम नहीं कि पुरुष प्रशिक्षार्थियों को ऐसे दौरों के बारे में क्या निर्देश मिलते हैं और उन्हें क्या सिखाया जाता है। एक गाँव में मैंने ५ पुरुष प्रशिक्षार्थी देखे और वे सब के सब लगभग १५ छोटे-छोटे बच्चों से खेलने में व्यस्त थे। गाँव के आदमियों से बातचीत करते हुए मैंने किसी को भी नहीं देखा।

फूलपुर सामुदायिक विकास योजना खण्ड

यहाँ पर औरतों को दर्ज़ी का काम सिखाने की एक क्लास लगती है। एक सूचना केन्द्र भी है, महिलाएँ जिसका यदा-कदा उपयोग करती हैं। यहाँ पर कुछ अच्छे नक्शे और चार्ट आदि हैं, पर मेरे विचार में नवसाक्षरों के लिए वे कुछ कठिन हैं और महिलाओं के लिए तो, जो प्रायः अशिक्षित हैं, इनका कोई भी उपयोग नहीं है। उनके लिए तो और चित्रमय चार्ट

तथा आसान तस्वीरें होनी चाहिएँ। दर्जी क्लास में लगभग १२ महिला प्रशिक्षार्थी थीं। उनमें से कुछ बारीक मलमल पर मशीन से काफ़ी नफ़ीस कढ़ाई कर रही थीं। ऐसी कढ़ाई और बढ़िया कपड़े के प्रयोग को निरुत्साहित किया जाना चाहिए क्योंकि न तो उनमें कोई कला होती है और न ही उनका कोई लाभ होता है। जैसी गाँवों की दशा है, उनमें तो उनका कोई उपयोग ही नहीं।

मनौरी

मैंने जिला समाज कल्याण संगठक के साथ यह गाँव देखा। साथ ही मैंने एक प्रोजैक्ट भी देखा जिसे एक ग्राम सेविका, ग्राम लक्ष्मी की सहायता से चला रही है। यहाँ समय-समय पर दस्तकारी अध्यापक भी आता है। इस केन्द्र में मैंने हिन्दू व मुस्लिम, दोनों सम्प्रदायों की औरतें देखीं।

क्या यह अच्छा न होगा कि कढ़ाई की क्लासें लगाने की बजाय इन महिला केन्द्रों में टोकरी और निवार बुनना सिखाया जाए जिससे वे कुछ पैसा भी कमा सकें? मैंने इस बारे में ज़िले के दस्तकारी अध्यापक से भी बातचीत की।

बाल गृह, स्वराज्य भवन

यहाँ पर १८ दिन से लेकर १८ बरस तक के १५० लड़के और लड़कियाँ हैं। यहाँ नन्हें-मुन्नों का एक विभाग है जिसमें नर्स उनकी देखभाल करती है। छोटे बच्चों के लिए एक नर्सरी स्कूल है। बड़े बच्चे शहर के स्कूलों में जाते हैं। नर्सरी स्कूल का अध्यापक प्रशिक्षित और योग्य है। इस नर्सरी स्कूल में मैंने पहली बार देखा कि सब बच्चे एक समय एक-सा ही काम करते हैं। उनका गीत और हावभाव उच्च कोटि के थे। सारा वातावरण मनोहारी था।

उपसंहार

महिला केन्द्र और महिला मण्डल आजकल एक प्रकार से दिन ही काट रहे हैं। कुछ प्रगति उन्होंने अवश्य की है, पर अब वह कुछ रुक-सी गई है। वे आगे नहीं बढ़ रहे। थोड़ी-बहुत कढ़ाई (जो कि प्रायः न तो नफ़ीस होती है और न ही उपयोगी) सिखाने के अलावा अधिकतर समय रामायण पढ़ने और भजन गाने में लगाया जाता है। महिला मण्डल स्त्रियों को शिक्षित नहीं बनाते। न तो उनको नागरिकता के बारे में कुछ बताया जाता है और न ही सामुदायिक विकास-योजनाओं के बारे में। स्त्रियों को मण्डल के बाहर का कुछ भी पता नहीं होता।

बातचीत करने से पता चला कि उनको सामुदायिक विकास-योजनाओं के बारे में कुछ भी पता नहीं है। वे अपने आपको ग्राम जीवन का एक अंग नहीं समझतीं; सामुदायिक विकास कार्यों में भी वे भाग नहीं लेतीं। उन्हें पंचायतों के कर्त्तव्यों और ऐसी ही अन्य बातों का भी कोई ज्ञान नहीं। मुझसे बात करने के बाद कुछ महिलाएँ पहली बार यह समझीं कि सामुदायिक विकास योजना क्षेत्रों में चलने वाले कार्यक्रम उनके 'अपने' हैं। पंचायतें भी उनकी 'अपनी' हैं जिनके द्वारा उन्हें अपनी आवाज़ उठानी चाहिए और अपनी समस्याओं का हल खोजना चाहिए।

गाँव की महिलाओं में सबसे महत्वपूर्ण होती हैं १२ से २५ बरस तक की महिलाएँ। उन पर समाज शिक्षा संगठकों और ग्राम सेविकाओं को विशेष ध्यान देना चाहिए। न केवल उनको जल्दी समझाया जा सकता है, बल्कि उन्हीं पर भावी सन्तति का प्रशिक्षण भी निर्भर करता है। पहले से उत्तम समाज की रचना में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए और उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विशेष कार्यक्रम बनाए जाने चाहिएँ।

सभी सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं में, जो विशेष रूप से महिलाओं में समाज कल्याण और ग्राम विकास कार्य में संलग्न हैं, सामंजस्य स्थापित करने की बहुत अधिक आवश्यकता है। ऐसा होने पर एक सुनियोजित कार्यक्रम बन सकेगा और वह कार्यक्रम नियमित ढंग से चल सकेगा। तभी विभिन्न संस्थाओं द्वारा छुट-पुट कामों की जगह कुछ ठोस काम हो सकेगा। उसका विस्तार हो सकेगा तथा शक्ति का अपव्यय भी न होगा।

★

क्या आप जानते हैं?

पिछले पाँच सालों में भारत के घी और तेलों आदि की प्रति व्यक्ति वार्षिक खपत १०.५ पौंड से बढ़ कर ११.५ पौंड हो गई है।

× × ×

संसार में सबसे अधिक पशु भारत में होते हुए भी यहाँ प्रति व्यक्ति दूध का औसत बहुत कम है। यदि औसत लिया जाए तो स्विटज़रलैण्ड की गाय भारतीय गाय की अपेक्षा १४ गुना अधिक दूध देती है। भारत में प्रति व्यक्ति दूध की औसत खपत ५.२ औंस और न्यूज़ीलैंड में ५६ औंस है।

× × ×

दूसरी योजना की अवधि में ११,१०० से अधिक गांवों और कस्बों में बिजली लगाई जाएगी।

सुमेरपुर विकास खण्ड की प्रगति

गणेशराम चौधरी

(राजस्थान सरकार ने एक नया परीक्षण शुरू किया है। इस परीक्षण का उद्देश्य यह है कि गाँववालों में से ही योग्य कार्यकर्त्ता चुन कर उन्हें कुछ गाँवों का दायित्व सौंप दिया जाए। पिछले वर्ष जुलाई में दो अवैतनिक (आनेररी) कृषि विस्तार अधिकारी नियुक्त किए गए थे। उनमें से सुमेरपुर खण्ड के अवैतनिक विस्तार अधिकारी श्री गणेशराम चौधरी के शब्दों में उनके खण्ड की प्रगति का विवरण यहाँ दिया जा रहा है—सम्पादक)

विभिन्न स्थानों का दौरा

यद्यपि गत माह मेरा कार्यक्षेत्र मुख्य रूप से सुमेरपुर ही रहा, किन्तु फिर भी मैं कुछ दूसरे गाँवों में गया। जिन गाँवों में गया, उनके नाम ये हैं—पोमावा, एरिनपुरा, रामनगर, अणगोर, ढोला, सांडेराव, कोशेलाव, हिंगोला व वसन्त आदि। प्रत्येक गाँव का कार्य सुव्यवस्थित ढंग से आगे बढ़ रहा था, फसलों आदि की दशा भी सन्तोषजनक थी। सब स्थानों पर निराई व गुड़ाई का कार्य हो रहा था। जहाँ यह कार्य नहीं हो रहा था, वहाँ पर शुरू करा दिया गया।

निराई-गुड़ाई का कार्य

पहले यहाँ के अधिकतर किसान निराई-गुड़ाई नियमित रूप से नहीं करते थे। इस कारण फसल नष्ट हो जाती थी और किसानों का बड़ा नुक्सान होता था। इस वर्ष निराई-गुड़ाई होने से फसल अच्छी नज़र आ रही है। लोगों में हर्ष की एक लहर दौड़ रही है।

वृक्षारोपण

गत माह जोधपुर, आगरा और इलाहाबाद से नींबू, मौसमी, नारंगी, अमरूद, अनार आदि के अच्छे पौधे मँगवा कर बाँटे गए। यह आदेश भी दिया गया कि हर रहट पर कम से कम नींबू के पेड़ तो अवश्य होने चाहिएँ। इसके अतिरिक्त ककड़ी, टमाटर और गोभी के अच्छे बीज बाँटे गए। विभिन्न प्रकार के जो पौधे बाँटे गए उनके आँकड़े निम्नलिखित हैं—नींबू १५००, मौसमी ७५, नारंगी १००, अनार २००, पपीता ५००; कुल २,३७५ पौधे बाँटे गए। यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि जनता इस कार्य को अपना रही है।

किचन गार्डन

यह एक ऐसा विचार है जिसकी पृष्ठभूमि में 'आम के आम और गुठलियों के दाम' का सिद्धान्त छिपा है। लोगों को यह बताया गया कि वे घरों में किस प्रकार साग-सब्ज़ी बो कर दोहरा लाभ उठा सकते हैं। किचन गार्डन से पैसे की भी बचत होती है। धनोपार्जन भी कर सकते हैं तथा घरों की शोभा भी बढ़ा सकते है। अनेक व्यक्तियों के घरों पर जा कर उन्हें आलू, तोरू आदि के अच्छे बीज दिए। अन्य ग्रामों के ग्राम सेवकों को भी बीज आदि दिए और आदेश भी जारी कर दिया गया कि प्रत्येक ग्राम सेवक अपने घर में साग-सब्ज़ी लगाए।

रासायनिक खाद के प्रदर्शन

विभिन्न स्थानों में रासायनिक खाद के प्रदर्शन किए और गाँववालों को रासायनिक खाद के प्रयोग के लिए राज़ी किया। सुमेरपुर व पोमावा में किए गए प्रदर्शन बहुत सफल रहे। लोगों में रासायनिक खाद के प्रति विश्वास बढ़ रहा है।

कृषि शिक्षा

कृषि विस्तार प्रशिक्षण केन्द्र शिवगंज के कुछ शिक्षार्थी मेरे पास आए। उनके सामने कई प्रकार के प्रदर्शन दिखाए जिनसे उनकी जानकारी में पर्याप्त वृद्धि हुई। बुनियादी पाठशाला के छात्रों को भी हल चलाना, रस्सी बनाना, मशीन द्वारा निराई-गुड़ाई करना सिखाया गया। छात्रों ने भी इस काम को बड़े चाव से सीखा।

पशुओं के रोग

इस क्षेत्र के जानवरों में गलघोंटा आदि अनेक ऐसे रोग पाए जाते हैं जिनके कारण अनेक मवेशी मर जाते हैं और किसानों का बड़ा नुकसान होता है। कोशेलाव गाँव में इस रोग ने भयंकर

रूप धारण किया। वहाँ के लोगों को समझाया गया कि इसकी चिकित्सा करना अति आवश्यक है। ग्राम सेवकों द्वारा रोग की सूचना तुरन्त उच्च पदाधिकारियों व चिकित्सकों को कर देनी चाहिए जिससे समय पर रोग का निवारण हो जाए। इसके अतिरिक्त फसल व नींबू आदि को कीड़ों से बचाने के लिए कीटाणु नाशक पाउडर छिड़कने की सलाह दी। रामनगर के लोगों ने इस सलाह से तुरन्त लाभ उठाया।

प्रतिष्ठित व्यक्तियों का आगमन

राजस्थान के मुख्य मन्त्री श्री मोहनलाल सुखाड़िया इस क्षेत्र में आए। मुख्य मन्त्री ने ढोला व सांडेराव इत्यादि गाँवों में भ्रमण करके वहाँ के कार्य का निरीक्षण किया और प्रगति पर काफ़ी सन्तोष प्रगट किया। इसके अतिरिक्त अन्य उच्च पदाधिकारियों ने भी दौरा किया जिसके कारण विकास कार्य में जनता की रुचि बढ़ी। अपनी कालोनी में भी मैंने किचन गार्डन लगवाए हैं। इसके अतिरिक्त फल-फूल आदि भी लगवाए हैं जिनसे मेरे पड़ोस के नवयुवकों में काफ़ी उत्साह उत्पन्न हुआ है।

★

आइए, पैदावार बढ़ाने की प्रतिज्ञा करें! — [पृष्ठ १० का शेषांश]

उपज के वर्गीकरण आदि का कार्य सहकारिता के आधार पर चलाने का एक समन्वित कार्यक्रम बनाया गया है। दूसरी योजना में अल्प-कालीन, माध्यमिक तथा दीर्घ-कालीन ऋणों के लिए क्रमशः १५० करोड़ रुपए, ५० करोड़ रुपए और २५ करोड़ रुपए के लक्ष्य रखे गए हैं। पहली योजना में ये लक्ष्य क्रमशः ३० करोड़ रुपए, १० करोड़ रुपए और ३ करोड़ रुपए के थे।

इस योजना में राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को भी बहुत महत्व दिया है। सामुदायिक विकास का एक अलग मन्त्रालय बना दिया गया है जो कृषि मन्त्रालय के साथ मिल कर काम करता है।

कृषि स्कूल

केन्द्रीय सरकार नए कृषि कालेज और पशु-चिकित्सा कालेज खोलने के लिए राज्यों को आर्थिक सहायता भी देती है। दूसरी योजना की अवधि में कुल मिला कर ६,५०० कृषि-स्नातकों की आवश्यकता होगी, जबकि वर्तमान कृषि कालेजों से सिर्फ ५,५०० स्नातक ही निकलेंगे। पशु-चिकित्सा स्नातकों के मामले में स्थिति और भी खराब है। ५,००० स्नातकों की आवश्यकता होगी लेकिन कालेजों से सिर्फ १,५०० निकलेंगे।

भारत में एक कठिनाई यह है कि बहुत कम कृषि स्नातक ऐसे होते हैं जो बाद में खेती करने के लिए अपने फारमों में जाते हैं। इस कारण उनके वैज्ञानिक ज्ञान का उतना लाभ नहीं हो पाता और न ही किसानों में उसका प्रसार हो पाता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए पहली योजना में योजना आयोग ने देश भर में कृषि स्कूल खोलने की सिफ़ारिश की थी। बम्बई सरकार ने ऐसा ही एक स्कूल पूना के समीप मंजरी में खोला था। इन स्कूलों में खेती, पशु-पालन, दुग्धशाला, भू-रक्षण, वन-विज्ञान, सहकार, कृषि-वस्तुओं की हाट व्यवस्था, विस्तार के तरीकों, सार्वजनिक स्वास्थ्य, ग्राम-प्रशासन और ग्राम-उद्योगों के बारे में शिक्षा दी जाती है। हर स्कूल का अलग-अलग खेत है, बीज उपजाने का एक फारम है और एक-एक मुर्गी-पालन फारम, फलों के वृक्षों का बियाड़ और पशु-चिकित्साशाला है।

हाल में केन्द्र और राज्यों के कृषि मन्त्रियों का जो सम्मेलन हुआ था, उसमें इस तरह के स्कूल खोलने पर बहुत ज़ोर दिया गया था।

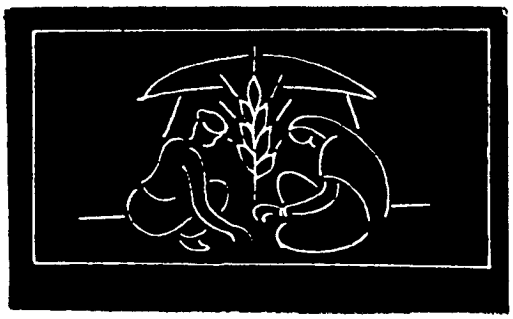

भूदान

गोकुलभाई भट्ट

"न पूरा काम है न ज़मीन, पेट कैसे भरें ? हमें खेती के लिए ज़मीन चाहिए।"

बाबा ने पूछा—"कितनी ज़मीन चाहिए ?"

हरिजनों के मुखिया ने जवाब दिया—"८० एकड़ काफ़ी होगी, चालीस एकड़ तरी और चालीस एकड़ खुश्की।"

अमर रोटी देनेवाली धरती की माँग ने बाबा के सामने एक बड़ा सवाल खड़ा कर दिया। 'ज़मीन कहाँ से दूँ ?' ऐसा प्रश्न बाबा के मन में उठा। उन्होंने गाँववालों के सामने बात रखी। रामचन्द्र रेड्डी नाम के एक सज्जन ने कहा—"मैं अपनी तथा अपने पाँच भाइयों की ओर से १०० एकड़ ज़मीन, जिसमें ५० एकड़ खुश्की और ५० एकड़ तरी है, इन भाइयों को आपके द्वारा भेंट करता हूँ।"

हैदराबाद प्रदेश के तेलंगाना ज़िले के पोचमपल्ली गाँव का यह किस्सा है, जब तारीख १८ अप्रैल, १९५१ को उस गाँव में सन्त विनोबा का पदार्पण हुआ था।

उस रोज़ रात को विनोबा जी को जल्दी नींद नहीं आई थी। वे इस घटना से ईश्वरीय संकेत पा चुके थे। पोचमपल्ली हिन्दुस्तान के पाँच लाख गाँवों का प्रतिनिधित्व कर रहा था, ऐसा उन्हें लगा। ज़मीन माँगनेवाले और ज़मीन की भेंट करने वाले, दोनों उनके सामने आए। इस अद्‌भुत इशारे के आधार पर दूसरे दिन अपनी पैदल यात्रा में वह दूसरे गाँव में पहुँचे। लोग बाबा के स्वागत के लिए फूल मालाएँ लाए थे। बाबा ने कहा—"ये फूल तो बड़े सुन्दर हैं। परन्तु इन फूलों की जो माता है, वह इससे भी सुन्दर है। मैं फूल नहीं चाहता हूँ। फूल भगवान पर चढ़ा दीजिए। मैं आपके घर का लड़का हूँ, और आप मेरे पिता जी हैं। आपके घर में चार लड़के हैं तो पाँचवाँ मैं हूँ। अपनी-अपनी ज़मीन का पाँचवाँ हिस्सा मुझे दीजिए।" उस समय श्रोता ऐसी माँग के लिए बिलकुल तैयार नहीं थे। लेकिन हिरोशिमा में ऐटम बम ने जो कर दिखाया, वही काम इस वक्तव्य ने किया। वहाँ पच्चीस एकड़ ज़मीन मिल गई। विनोबा जी सोचने लगे। "जब दो बिन्दु मिल जाते हैं, तो रेखा बन जाती है, ऐसा युकलीड ने सिखाया है। कल शाम की सभा में सौ एकड़ ज़मीन मिली और आज सुबह पच्चीस एकड़ मिली। इस तरह दो बिन्दु मिल गए और मेरी रेखा तैयार हो गई।"

अब उस बात को चार साल बीत चुके हैं। सौ एकड़ के हज़ार बने, हज़ार एकड़ के लाख एकड़ब ने और अब लाख के चालीस लाख बने हैं। साढ़े चार लाख दाताओं ने दान दिया। अगर ऐसा हिताब लगाया जाए कि सौ मनुष्यों ने सुना, एक मनुष्य ने दान दिया, तो इसका मतलब हुआ कि साढ़े चार करोड़ लोगों ने भूदान की बात सुनी।

सन्त विनोबा कौन हैं—गृहस्थ हैं या ब्रह्मचारी ? पढ़े-लिखे हैं या अपढ़ ? महाराष्ट्री हैं या गुजराती ? वृद्ध हैं या युवा ? साधू हैं या फ़क़ीर ? ऐसे प्रश्न अनेक लोगों के दिल में उठते हैं और विचित्र उत्तर भी मिलते हैं। क्योंकि सन्त विनोबा, जिनको ग्रामीण जनता बाबा के प्रिय नाम से सम्बोधित करती है, साढ़े चार साल पहले छुपे हुए थे। आज वह ६० साल का होने पर भी सातत्य योग का साधक, गाँव-गाँव, घर-घर, डगर-डगर मिट्टी माँगता पैदल घूमता है। वह अपने गुरु राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का रामराज्य का स्वप्न पूरा करने का कार्य भूदान द्वारा कर रहा है। महात्मा गांधी ने अपने इस तेजस्वी शिष्य-पुत्र के सम्बन्ध में पत्रों में लिखा था—

ईश्वर तुम्हें दीर्घायु करे और तुम्हारा उपयोग हिन्द की उन्नति के लिए हो, यही मेरी कामना है। (१९१८)

तुम्हारी श्रद्धा और भक्ति आँखों में हर्ष के आँसू लाती है। मैं इसके योग्य होऊँ या न होऊँ, परन्तु तुम्हें तो यह फलेगा ही। तुम बड़ी सेवा के निमित्त बनोगे। (१९३३)

आज सन्त विनोबा सचमुच एक बड़ी सेवा के निमित्त बन चुके हैं। पोचमपल्ली से भूदान गंगोत्री का प्रादुर्भाव हुआ। तब से आशा की किरणें फूट रही हैं, अन्धकार दूर होता जाता है, पथ प्रकाशित हो रहा है, भारत शान्ति मन्त्र सुनाने की अपनी योग्यता साबित कर रहा है। भूदान आन्दोलन आज देश के कोने-कोने में फैल रहा है। जनता के दिमागों को झकझोर रहा है। जनता उत्कण्ठित हो रही है। भारतवर्ष की परम्परा के अनुकूल और अनुरूप यह प्रवृत्ति है। इसमें विसंवादिता नहीं है। यह कार्य मानवता को विकास की ओर ले जाता है, हृदय-हृदय को जोड़ने वाली कड़ी है, फटे दिलों को बाँधने वाला यह धागा है। प्रेम इसकी आधार शिला है।

सब का कल्याण—सर्वोदय इसका लक्ष्य है।

हमारे देश ने राजनीतिक आज़ादी महात्मा गांधी के नेतृत्व में हासिल की, मार खा कर, जेल जा कर, कुरबानी करके। दुनिया में

किसी भी देश ने इस तरह आज़ादी प्राप्त नहीं की। हमारा तरीका न्यारा था, बेमिसाल था। इस राजनीतिक आज़ादी के बाद आर्थिक समानता आनी चाहिए। गरीब-अमीर, हजूर-मजूर का भेद मिटना चाहिए। ऊँच-नीच की दीवारें गिरनी चाहिएँ, विषमता का अन्त आना चाहिए और भ्रातृभाव का साम्राज्य स्थापित होना चाहिए। ऐसे पवित्र लक्ष्य को सिद्ध करने के लिए साधन भी शुद्ध होने चाहिएँ। दण्ड या शक्ति से समानता लाई जा सकती है, लेकिन वह समानता बाहरी होती है, अन्दर की नहीं; वह स्थायी नहीं होती। दूसरे पक्ष के हाथ में सत्ता जाने से समाज रचना बदल जाएगी। एक बार एक पक्ष एक वर्ग को दबाता है, तो दूसरी बार दूसरा पक्ष हावी होता है। वर्ग भेद मिटता नहीं है। भूदान का रास्ता सामंजस्य का, परस्पर सद्-भाव का, भाई-भाई को मदद पहुँचाने का, प्रेम-प्रेरित मार्ग है। किसी के दबाव में आकर भूदान नहीं किया जाता।

आचार्य विनोबा भावे

लेकिन मेरा पड़ौसी बेरोज़गार है, उसे रोटी देनेवाली ज़मीन की ज़रूरत है, तो मैं अपने पास से उसे दूँ। चाहे मेरे पास थोड़ी है या ज्यादा, परन्तु मेरे पास है, तो मैं उसे दूं, यह विचार पैदा करने वाला भूदान आन्दोलन यह जीवन को ऊर्ध्व गति पर ले जाने वाले आरोहण है। यह स्वार्थ मूलक विचारों को बदलनेवाला क्रान्तिकारी साधन है। जनमानस बदलने वाली लोक-नीति की यह प्रक्रिया है। **सर्वे सुखिनः सन्तुः** .....का मधुर स्वर सुनाने वाली यह बीन है।

भू और दान, दो शब्द स्पष्ट हैं। दान का मूल अर्थ श्री शंकराचार्य की व्याख्या के अनुसार **"दानं संविभागः"**—सम्यक् वितरण है। उसी अर्थ में दान शब्द का प्रयोग विनोबा जी ने किया है। और यह बँटवारा कौन करेगा और कैसे करेगा ? गाँव वाले, दान देने-वाले, बेज़मीन, सब मिल कर आपस में बँटवारा करते हैं। ज़मीन के मालिक ज़मीन को क्यों छोड़ेंगे ? भूमि को वे अपनी सम्पत्ति मानते हैं और अपने आपको बड़े गर्व से भूमि-पति, भूस्वामी आदि समझते हैं। **"माता भूमिः पुत्रोहम् पृथिव्या"** भूमि मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूँ। भूमिपुत्र भूमि के मालिक बन बैठे हैं। हवा, पानी, रोशनी की तरह धरती भी भगवान की है, इस सत्य का विस्मरण हो गया है।

विनोबा जी कहते हैं—परमेश्वर की मिल्कियत हमने अपने हाथ में ले ली। उसकी जगह हम भूमिपति बन गए। यह बात अभी सौ-डेढ़ सौ साल के अन्दर ही हुई है। पहले भूमि सारे गाँव

की मानी जाती थी। कुछ लोग उस पर खेती करते थे और बाकी लोग बढई, लोहार, कुम्हार, बुनकर वगैरह का अपना-अपना धन्धा करते थे। फसल जो होती थी, वह घर-घर में बँटती थी। साल के आखिर में हर घर में गल्ले का हिस्सा दिया जाता था। कारीगर लोग, जिस घर में ज़रूरत होती थी, काम करते थे। जिस साल फसल कम आई, उस साल हर एक को कम हिस्सा मिलता था। ज़मीन तब भी थी। **(नरहन पड़ाव, दरभंगा—१७-८-१९५४)**

जिनके पास है, वह अपने और अपने परिवार के लिए ही नहीं है, प्रत्युत पड़ौसी, मुहल्ले वाले, गाँववाले, देशवाले और दुनिया के मानव मात्र के लिए है। इस बात का प्रतिपादन होता है। ज़मीन हमारी मिल्कियत नहीं है, धरोहर है। और हम सब भगवान की सन्तान हैं, तो बाँट कर खाएँ। इसी में सब का भला है। भूदान अमीरी और गरीबी का बँटवारा करता है। दुख को और सुख को बाँट देता है। जिस समाज में ऐसी स्थिति पैदा हो जाए, वहाँ दुख कहाँ से होए? सब को समान अवसर मिले, कमाने के साधन सब को मिलें, एक दूसरे को परस्पर सहयोग देते रहें, वहाँ वैमनस्य कैसे? दण्ड की, कानून की ज़रूरत ऐसी हवा में कितनी रहेगी? गाँव, देश, मानव समाज एक परिवार-सा बन जाता है।

प्रश्न उठेगा कि हमारे हाथ में हमारा देश है, तो कानून द्वारा भूमि का बँटवारा कर दिया जाए। कहने में यह बात ठीक लगती है, परन्तु कानून कारगर तभी हो सकता है जब कानून पालन की हवा पैदा हो गई हो। कई अच्छे कानून, नियम बने हैं, लेकिन जनता उनका स्वागत करने को तैयार नहीं है। ऐसे कानून किताबों में ही पड़े रह जाते हैं। कानून का रास्ता साफ़ करने के लिए भी जन-जागृति को लाने वाला भूदान आवश्यक है। आज तक करीब साढ़े चार साल में देश भर में चालीस लाख एकड़ भूमि दान में मिल चुकी है। इसकी औसतन कीमत प्रति एकड़ २५० रुपए लगावें, तो कुल कीमत एक अरब रुपया होगी। अपने संविधान की मंशा के माफ़िक ज़मीन निजी मिल्कियत है। बिना मोल दिए भूमि नहीं छीनी जा सकती। बेज़मीन, साधनहीन भाई के पास रुपए कहाँ हैं? इन सब बातों का विचार करते हैं, तब भूदान की महत्ता का ख्याल आता है। विचार और हृदय परिवर्तन की कल्पना होती है। नए समाज का सुखमय सपना पूरा हो सकता है, ऐसी आशा बँधती है।

एक बात यह भी कही जाती है कि जो ज़मीन मिलती है, वह बंजर होती है। यह बात सत्य नहीं है। आज ही उपयोग में न लाई जा सके, ऐसी भूमि का अन्दाज़ा तीस-पैंतीस प्रतिशत से ज्यादा का नहीं है। फिर भी मान लिया जाए कि बेकार भूमि जिसने दी,

विनोबा जी की भूदान यात्रा

उसने अच्छा नहीं किया, किन्तु उसने एक कदम तो आगे बढ़ाया ही है। अपना अधिकार किंचित मात्र भी छोड़ दिया न ? और एक बार जिसने अपना अधिकार दूसरों को हस्तान्तरित करने का रास्ता पकड़ा है, वह अच्छी भूमि देने का कदम उठाएगा ही। दिल खुला है, विचार बदलने लगा है, मानस परिवर्तन होने लगा है तो अपेक्षित त्याग होने की सम्भावना बन जाती है। सर्वस्व दान इसी भावना में फलित हुआ है। आज ग्राम दान की बाढ़ आ रही है। अकेले उड़ीसा प्रदेश में आठ सौ ग्राम दान में मिले हैं।

गरीबों से, कम ज़मीन वालों से, क्यों माँगा जाता है ? ज़मीन के टुकड़े हो जाएँगे, ऐसे प्रश्न भी पूछे जाते हैं। अपने देश में ६० प्रतिशत गरीब हैं और गरीब अगर अपनी हालत को सुधारने का काम नहीं करेंगे तो कौन करेगा ? जो १० प्रतिशत सुखजीवी अमीर हैं, वे क्यों आगे आएँगे ? दुखी, दुखी की मदद करेगा, तब ही समाज शक्तिशाली बनेगा। किसी दूसरे की मेहरबानी पर जीना नहीं है। परन्तु भाई-भाई के सहारे जीवन बसर करना है। इसलिए सब से भूदान माँगा जाता है। जिसके पास है, वह ऐसे भाइयों की मदद करे जिनके पास नहीं है। थोड़े में से थोड़ा दे। आधे में से आधा त्याग करने में मात्रा नहीं देखी जाती। वहाँ तो भावना सर्वोपरि होती है। फिर भी कम ज़मीन में उत्पादन घटेगा ही, ऐसा नहीं है। थोड़ी ज़मीन वाले अपनी भूमि को ज्यादा अच्छी तरह संभालेंगे और ज्यादा उत्पन्न करने में प्रयत्नशील होंगे, यह कायदा ध्यान से बाहर नहीं जाना चाहिए। ज़मीन के टुकड़े भले ही हों, लेकिन दिल के टुकड़े नहीं होने चाहिएँ जो कि विषमता या अभाव से होते हैं या बने रहते हैं।

सम्पत्तिदान, श्रमदान, बुद्धिदान, जीवनदान, कूपदान आदि अनेक धाराएँ भूदान से निकली हैं। जिनके पास ज़मीन नहीं हैं, वे अपनी आय का कुछ हिस्सा दें। समाज से सम्पत्ति आई है, तनख्वाह के रूप में, व्यापार के मुनाफ़े के रूप में, बुद्धि-ज्ञान के रूप में, वह अपने ही लिए नहीं है। समाज को अर्पित करनी है। जीवन, सम्पत्ति-सब में से अपना हिस्सा समाज को अर्पित करना है। इसलिए भूदान के साथ यज्ञ शब्द जोड़ा गया है।

भूदान यज्ञ, एक तरह से शान्ति का, विश्व शान्ति का यज्ञ है। उसमें सबको आहुति, पवित्र आहुति देनी है। जो नहीं देता है, वह विनोबा जी के शब्दों में देशद्रोह करता है। अध्ययन, मनन और आचरण, ये सीढ़ियाँ हैं, जिसे हम ग्राम राज, सर्वोदय समाज कहते हैं।

यह कार्य किसी एक पक्ष का, वर्ग का नहीं है, इसलिए यह पक्षातीत और वर्गातीत है। यह कार्य सब जगह हो रहा है। छोटे बड़े दानियों से ज़मीन मिली है, सम्पत्तिदान मिला है, जीवनदान मिला है, साधनदान, श्रमदान वगैरह भी। भूमि वितरण का कार्य भी चल रहा है। दृष्टि विचार, आचरण तथा मूल्यांकन में आमूल क्रान्ति लाने वाला भूदान यज्ञ है—सर्व जन हिताय, सर्व जन सुखाय।

★

ये भूदानी टोलियाँ

मदन विरक्त

धन और धरती हमें दान दो,
अपना भाई हमें मान लो,
माँग रही अधिकार सभी से, ये भूदानी झोलियाँ।
गाँव गाँव में बढ़ी जा रही, ये भूदानी टोलियाँ ॥

जागृति का सन्देश सुना दो,
मानवता के क्लेश मिटा दो,
श्रमजीवी, मज़दूर, किसानों ने, बोली ये बोलियाँ।
गाँव गाँव में बढ़ी जा रहीं, ये भूदानी टोलियाँ ॥

सुरभित फूल रहे उपवन का,
निखरे प्रातः सदा जीवन का,
बढ़ो जा रही क्रान्ति जगाने, ये भूदानी टोलियाँ।
गाँव गाँव में बढ़ी जा रही, ये भूदानी टोलियाँ ॥

एक ब्लाक की झाँकी

व्यंकटराव यादव

'ग्राम सेवकों' के देखो ये नए ढंग के बने मकान,
जिन्हें देख कर कृषक बन्धु भी करते निज घर का निर्माण।
नित्य गाँव में जा-जा कर ये नई बातें बतलाते,
कैसे बदलें रहन-सहन, यह लोगों को सिखलाते।
इनकी राय वेद की वाणी आज ग्रामजन जानें,
'साथी', 'जानकर', 'पथदर्शक', इनको ही वे मानें।
अपना देश किसानों का है, जीवित हैं हम खेती पर,
खेती की है उपज बढ़ाना, यही लक्ष्य मन में रख कर।
सुघड़ नारियाँ तुम्हें दिखेंगी, गड्ढों में खाद बनाते,
जिसे डालने से मक्का में चार-चार भुट्टे आते।
उन्नत बीज, नई खादों को यहाँ आज़माया जाता,
जब उनका परिणाम निकलता तभी कृषक पतियाता।
लोहकार भी यहाँ मिलेंगे, सुधरे कृषि-औज़ार बनाते,
करते दूना काम, कृषक का श्रम औ' समय बचाते।
कहीं नए खुद रहे कुएँ तो कहीं कर रहे उनको गहरे,
गरमी की ऋतु में भी जिससे उनमें पानी ठहरे।
नींबू, आम, पपीतों के भी कुछ लोगों ने बाग़ लगाए,
साग-भाजियाँ बेच-बेच कर कितनों ही ने दाम कमाए।
बना रहे ग्रामीण देख लो पानी का आदर्श कुआँ,
बना रहीं महिलाएँ चूल्हे जिनमें बिलकुल हो न धुआँ।
गड्ढे बन्द किए रस्तों के, बने खरंज, नालियां,
मच्छर पैदा नहीं हुए तो, मेहनत का फल पालिया।
डी० डी० टी० औ' गेमक्सीन का कभी-कभी होता छिड़काव,
मलेरिया का इससे होता, सस्ता पर पेटेण्ट रुकाव।
मुखिया औ' सरपंच ढो रहे, कहीं तगारी से चूना,
शासन के धन से भी उनको करना है श्रम दूना।
और बनानी है बच्चों के लिए माध्यमिक शाला,
नहीं रहे कोई अज्ञानी, होय अपढ़ता का मुँह काला।
बेसिक शालाओं में शिक्षक सिखलाते खेती-बाड़ी,
सब ही बाबू बन जाएँ तो कैसे चले गाँव की गाड़ी?
देखो छोटे-छोटे बच्चे हैंड पम्प से जल खींचें,
अपनी बाल वाटिका के वे नन्हें पौधों को सींचें।
झूल रहे हैं कहीं देख लो लोहे के झूलों पर बच्चे,
फिसल रहे फिसलन पट्टी पर, इसमें भी हैं ना कच्चे।
यहाँ पढ़ रहे प्रौढ़ देख लो पन्द्रह से पचास तक के,
क्यों न पढ़ें वे अधिकारी जब एक वोट के हक के?
ले कर पढ़ते नई कतावें, नित नूतन धरती के लाल,
नए तरीके कृषि के अपना होवें क्यों न निहाल?
जुड़ते जनता-घर में सब ही, रोज़ रात को आ कर,
भजन मण्डली मुग्ध कर रही गीत योजना के गा कर।
हारमोनियम तबले बजते कहीं छमाछम करते घुंघरू,
खबर रेडियो देकर कहता कान सभी के मैं कतरूं।
मार्च कर रहे युवक कहीं पर मुड़ना सीखें दाएँ बाएँ,
सीना और कसीदा सीखें कहीं संघ में महिलाएँ।
कहीं कबड्डी युवक खेलते, कहीं खेलते व्हालीबाल,
कहीं अखाड़ों में दिखलाते अपना छिपा कमाल।
शिविर चल रहे युवकों के जो चला रहे दिन भर गेंती,
नींवें खोदें, गिट्टी डालें, मिला रहे चूने में रेती।
ऐसे ही शिविरों में ढलते गाँवों के भावी लीडर,
खुद जब करते काम, सभी से लेने में क्या उनको डर?
कभी-कभी होते रहते हैं नाटक और सिनेमा,
"पर्दे पर तू मुझे देखले कहता खेमा को पेमा"।
उसे याद है कब खींचा था मूवी से उसका फोटू,
गेंती जब वह चला रहा था, पास खड़ा था तब छोटू।
गोल बाँध कर भील नाचते, कहीं नाचते हैं ग्वाले,
मिल जातीं महिलाएँ उनमें, मिल जाते लड़के-बाले।
मोटर में ग्रामों की टोली, ब्लाक-ब्लाक में जाती,
कौन गाँव हमसे जीतेगा, इसकी थाह लगाती।
कोई हार रहे हैं, कोई जीत रहे श्रम की ट्राफ़ी,
उसे जीतने में होती है यहाँ कशमकश काफ़ी।
लेनदेन आपस में करते सभा बनाकर सहकारी,
छूटी, जो थी लगी आज तक कर्ज-ब्याज की बीमारी।
अच्छे खाद, बीज लेते हैं सहकारी भण्डारों से,
पूर्ण मूल्य अपनी फ़सलों का पाते हैं बाज़ारों से।
नई सड़कों ने कम की शहर गाँव की दूरी,
बढ़ी जा रही नित्य यहाँ पर मज़दूरों की मज़दूरी।
यहाँ खुले हैं तरह-तरह के लघु-धन्धे और उद्योग,
कहीं सुतारी, कहीं लुहारी, कहीं चटाई बुनते लोग।
'अपनी मदद आप' करने का लगा रहे सब नारा,
सच है खुद श्रम करने वाला नहीं किसी से हारा।
यह झाँकी इसलिए दिखाई तुम भी परिचित हो जाओ,
बापू के सपनों का भारत बनने में हाथ बटाओ।

★

देहातों में चतुर्मुखी प्रगति

सामुदायिक विकास-योजनाओं तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं की प्रगति की एक समीक्षा में बताया गया है कि इन कामों में जनता का सहयोग बराबर बढ़ता जा रहा है। यह समीक्षा, इस कार्यक्रम के आरम्भ होने से लेकर सितम्बर, १९५६ तक की है। समीक्षा से पता चलता है कि सामुदायिक विकास-योजनाओं पर सरकार ने जितना धन खर्च किया, गाँवों की जनता का योगदान उसके ६० प्रतिशत के बराबर रहा। राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों में जनता के योग का मूल्य ७ करोड़ १ लाख रुपए रहा, जबकि सरकारी खर्च इससे ३ लाख रुपए कम रहा।

जनता के योग का मूल्य

अक्टूबर, १९५२ से सितम्बर, १९५६ तक सरकार ने सभी सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों में लगभग ५६ करोड़ ३० लाख रुपए लगाए और लोगों ने नकद, सामान और श्रमदान के रूप में ३२ करोड़ ९६ लाख रुपए दिए।

सामुदायिक विकास-योजना खण्डों पर सरकार के ४९ करोड़ रुपए खर्च हुए हैं और इसमें जनता के योग का मूल्य २६ करोड़ रुपए है। राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों पर सरकार ने ७ करोड़ रुपए खर्च किए।

सरकार ने पशु-पालन और कृषि-विस्तार सम्बन्धी योजनाओं पर लगभग ४ करोड़ २५ लाख रुपए खर्च किए। इसी प्रकार सिंचाई और ज़मीन साफ़ करने पर क्रमशः ९ करोड़ २४ लाख और ९३ लाख रुपए खर्च हुए। स्वास्थ्य तथा सफ़ाई पर ५ करोड़ १० लाख रुपए, शिक्षा पर ३ करोड़ ६८ लाख रुपए, समाज-शिक्षा पर २ करोड़ १३ लाख रुपए, संचार-साधनों पर ६ करोड़ २३ लाख रुपए, देहाती उद्योग-धन्धों और दस्तकारियों पर १ करोड़ ८३ लाख रुपए और मकान बनवाने पर ६८ लाख रुपए खर्च किए गए।

देहातों में १ करोड़ ४० लाख मन रासायनिक खाद और ६१ लाख मन बढ़िया बीज बाँटे गए। इस अवधि में १६.६७ लाख एकड़ ज़मीन खेती योग्य बनाई गई और २८.५ लाख एकड़ में सिंचाई की सुविधाएँ दी गईं। फलों और तरकारियों की खेती क्रमशः २.१६ लाख एकड़ और ५.५७ लाख एकड़ में की गई और ३,८३८ केन्द्र ग्राम बनाए गए।

सामुदायिक विकास-योजना के अंतर्गत उक्त अवधि में ९८१ आरम्भिक स्वास्थ्य-केन्द्र और ९४७ जच्चा-बच्चा केन्द्र स्थापित किए गए। साथ ही १ लाख ४७ हज़ार पाखाने और ८७ लाख गज लम्बी नालियाँ बनाई गईं और ५८ हज़ार नए कुएँ खोदे गए तथा ८२ हज़ार कुओं का जीर्णोद्धार किया गया। २० हज़ार नए स्कूल खोले गए और ७,७९४ स्कूलों को बुनियादी स्कूलों में बदला गया।

प्रौढ़ शिक्षा

इस अवधि में १२.८४ लाख प्रौढ़ों को साक्षर बनाया गया और १ लाख से भी अधिक युवक क्लबों, किसान यूनियनों और महिला समितियों आदि का गठन किया गया। सड़कों आदि के बनाने में भी काफी प्रगति हुई। ७ हज़ार मील से अधिक की पक्की सड़कें और ५२ हज़ार मील लम्बी कच्ची सड़कें बनीं तथा ३० हज़ार मील लम्बी कच्ची सड़कों को ठीक किया गया। ६५ हज़ार नए मकान बनाए गए और ६,१५४ नमूने के मकान तैयार किए गए। देहाती कलाओं और दस्तकारियों की उन्नति के कार्यक्रम के अन्तर्गत काम सिखाने के २,०४० केन्द्र खोले गए, जिनमें ७५ हज़ार व्यक्तियों ने काम सीखा और अभ्यास किया।

सहकार समितियों में वृद्धि

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत गाँवों में सहकार की बहुत वृद्धि हुई। इस अवधि में ४१ हज़ार नई सहकार समितियाँ खोली गईं, जिनके सदस्यों की संख्या २३.३ लाख तक पहुँचती है।

स्थानीय स्वायत्त शासन के क्षेत्र में भी इस अवधि में काफ़ी प्रगति हुई। २८ हज़ार पंचायतों और ४६ हज़ार ग्राम परिषदों और विकास मण्डलों आदि संस्थाओं की स्थापना इस प्रगति की परिचायक है। ये संस्थाएँ तरह-तरह की योजनाएँ बनाने और उनको पूरा करने के काम में बहुत हाथ बँटा रही हैं। इन्हें सरकारी विशेषज्ञों की पूरी-पूरी सहायता प्राप्त होती है।

★

प्रगति के पथ पर

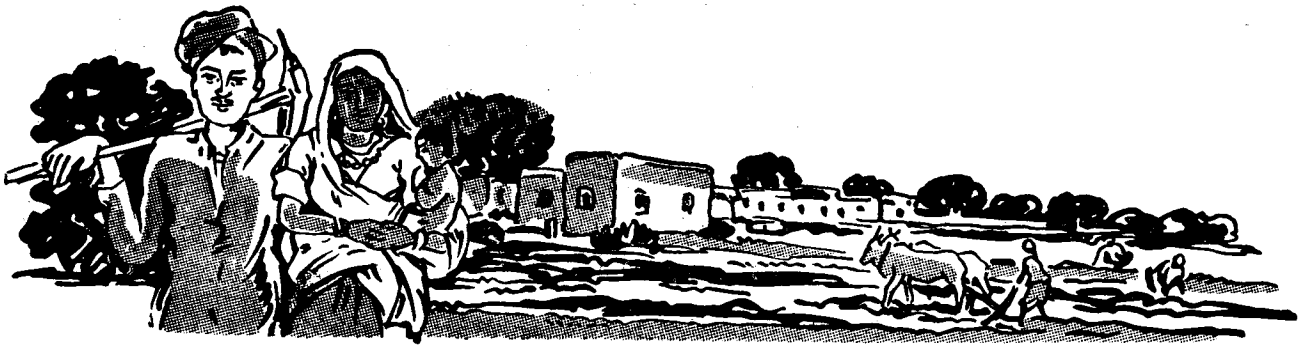

कृषि-उत्पादन बढ़ाना राष्ट्र की सबसे बड़ी आवश्यकता

राँची में सामुदायिक विकास की अन्तर्राज्य क्षेत्रीय गोष्ठी का जो चार दिवसीय सम्मेलन हुआ, उसमें होने वाले विचार-विमर्श में सभी ने कृषि-उत्पादन की वृद्धि को राष्ट्र के लिए अत्यावश्यक बताया।

इस गोष्ठी का आयोजन सामुदायिक विकास मन्त्रालय ने किया था। मन्त्रालय कृषि-उत्पादन की वृद्धि पर कितना ज़ोर देता है, यह इसी बात से स्पष्ट हो जाता है कि सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के सब पहलुओं की जाँच के लिए जो समितियाँ बनाई गई हैं, उन सब के सदस्यों को इस सम्मेलन में बुलाया गया था, ताकि वे देश के कृषि-उत्पादन को बढ़ाने और मुख्यतः इस काम को राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों में सामुदायिक विकास-कार्यकर्त्ताओं द्वारा करने के बारे में सुझाव दे सकें।

गोष्ठी में यह अनुभव किया गया कि उत्पादन वृद्धि के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में उत्साह पैदा करने की ज़रूरत है। इसके लिए सभी माध्यमों द्वारा ज़ोरदार प्रचार किया जाना चाहिए। गोष्ठी ने सिफ़ारिश की कि किसानों को कृषि-उत्पादन बढ़ाने का महत्व समझाने के लिए खण्ड सलाहकार मण्डल के सदस्यों का उपयोग किया जाए।

ग्राम सेवक किसानों के सीधे सम्पर्क में रहते हैं। उन्हें इतना ज्ञान होना चाहिए कि वे किसानों को समझा सकें कि पैदावार बढ़ाना क्यों ज़रूरी है और उसके लिए क्या किया जा सकता है। इस सिलसिले में गोष्ठी में कहा गया कि प्रत्येक ग्राम सेवक के क्षेत्र को कम किया जा सकता है। साथ ही फसल प्रतियोगिताओं, प्रदर्शनियों और रेडियो पर किसान गोष्ठियों की संख्या बढ़ाने की सिफ़ारिश की गई।

पैदावार बढ़ाने के लिए क्या कदम उठाए जाएँ, इस पर विचार करते हुए गोष्ठी में किसानों को अल्प-कालीन ऋण देने पर विशेष ज़ोर दिया गया। सभी समितियाँ, जो पहले ही विस्तृत रूप से इस पर विचार कर चुकी थीं, इस बात पर एकमत थीं कि सहकारिता द्वारा किसानों को ऋण देना सबसे अच्छा है। किसानों को अल्प काल के लिए ऋण देने की सुविधाएँ बढ़ाने और इन ऋणों को देने की विधि सरल बनाने के बारे में भी मतैक्य था।

गोष्ठी में एक विचार यह भी प्रकट किया गया कि ऋण मुख्यतः उर्वरक, अच्छे बीज और कृषि औज़ारों के रूप में दिया जाना चाहिए। सहकारी संस्थाओं को फसल को देख कर ही ऋण देना चाहिए।

जिन क्षेत्रों में सहकारी संस्थाएँ नहीं है, वहाँ तकावी ऋण देने में अधिक उदारता बरतनी चाहिए।

कृषि-उत्पादन बढ़ाने में किसानों का अधिकाधिक सहयोग लेना चाहिए। इसके लिए हरेक गाँव का कृषि कार्यक्रम उसी गाँव के लोगों को खण्ड अधिकारियों की सहायता से बनाना चाहिए। अवैतनिक ग्राम कार्यकर्त्ताओं को कृषि कार्यक्रम के विभिन्न पहलुओं का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

गोष्ठी में एक समिति ने यह सुझाया कि जो गाँव योजना अनुसार सब से अच्छा काम करें, उन्हें पुरस्कार दिया जाना चाहिए।

छोटे तथा ग्रामोद्योगों का विकास कार्यक्रम

छोटे तथा ग्रामोद्योगों के विकास के लिए सामुदायिक विकास-योजना अधिकारियों (उद्योग) ने देश के विभिन्न राज्यों में कुछ प्रारम्भिक योजनाओं के अन्तर्गत सर्वेक्षण किए हैं। इन योजना-क्षेत्रों में इन उद्योगों के विकास के लिए कार्यक्रम बनाए गए हैं। इस कार्यक्रम बनाने में बड़े-बड़े अखिल भारतीय मण्डलों और सामुदायिक विकास मन्त्रालय के प्रतिनिधियों ने भी सहायता की है। प्रत्येक प्रारम्भिक योजना के लिए सलाहकार समितियाँ बनाई जा रही हैं।

प्रारम्भिक योजनाओं का विशद कार्यक्रम क्रियान्वित करने के लिए वाणिज्य तथा उद्योग मन्त्रालय ने दल नियुक्त किए हैं। प्रत्येक दल में दो-दो अर्थशास्त्री और एक-एक इंजीनियर हैं। दल छोटे और ग्रामोद्योगों के विकास के लिए सरल कार्यक्रम सुझाएँगे। आशा की जाती है कि प्रत्येक दल अपने-अपने क्षेत्र का का कार्य लगभग चार महीनों में पूरा कर लेगा।

विस्तार-अधिकारियों (उद्योग) को काम सिखाने के लिए एक समन्वित कार्यक्रम बनाया गया है। इसी तरह छोटे तथा ग्रामोद्योगों के विकास से सम्बद्ध कर्मचारियों को भी काम सिखाने की व्यवस्था की गई है। इसमें खण्ड विकास अधिकारी, समाज-शिक्षा संगठनकर्ता, विस्तार अधिकारी (सहयोग) और ग्राम सेवक भी शामिल हैं।

कारीगरों को काम सिखाने की दो श्रेणियाँ रखी गई हैं—वर्तमान हुनर में सुधार करना और नए-नए शिल्पों का काम सिखाना। ख़ास-ख़ास शिल्पों का काम सिखाने के लिए कई व्यावसायिक स्कूल और उत्पादन तथा प्रशिक्षण केन्द्र खोले गए हैं। इस साल की पहली तिमाही तक इस तरह के ११,३१८ केन्द्र खोले जा चुके थे और ५६,००० कारीगरों को काम सिखाया जा चुका था।

योजना-क्षेत्रों के इस घरेलू उद्योग कार्यक्रम के परिणामस्वरूप इस साल की पहली तिमाही तक कुल मिलाकर ५६ हज़ार व्यक्तियों को पूरे समय का काम मिला। इसके अलावा ४ लाख से भी अधिक व्यक्तियों को थोड़े समय का काम मिला। आशा की जाती है कि छोटे और घरेलू उद्योगों के विकास के लिए और अधिक प्रयत्न करने से दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में और ज्यादा लोगों को रोज़गार मिल सकेगा।

बिजली-करघों के लिए राज्यों को केन्द्रीय अनुदान

बम्बई, केरल, राजस्थान, बिहार और मध्यप्रदेश राज्यों ने बिजली से चलने वाले ६,०५५ करघे लगाने की जो योजनाएँ बनाई हैं, उन्हें भारत सरकार ने स्वीकार कर लिया है।

भारत सरकार ने चालू और आगामी वित्तीय वर्ष में देश भर में बिजली से चलने वाले ३५,००० करघे लगाने का निश्चय किया था। तब से वह दो बार ऐसी योजनाएँ स्वीकार कर चुकी है। करघे लगाने की कुछ और राज्यों की योजनाओं पर अभी विचार हो रहा है।

दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में जो १ अरब ७० करोड़ गज़ अतिरिक्त कपड़ा तैयार करने की योजना है, उनमें से २० करोड़ गज़ कपड़ा बिजली से चलनेवाले इन करघों से तैयार किया जाएगा। अब जो बुनकर हथकरघों पर काम कर रहे है, उन्हें भी ऐसे करघे लगाने की सुविधा दी जाएगी।

इस काम के लिए राज्य सरकारों को ऋण और अनुदानों के रूप में सहायता दी जा रही है।

बिजली के करघे लगाने का उद्देश्य बुनकरों की आय बढ़ना है। इन करघों को इस ढंग से लगाया जा रहा है कि इनसे कपड़े की अतिरिक्त मांग की पूर्ति हो सके और हथकरघों पर काम करनेवाले बुनकरों को पूरे समय का रोज़गार मिल सके। दूसरी योजना में जो १ अरब ७० करोड़ गज अतिरिक्त कपड़ा तैयार किया जाएगा, उसमें से १ अरब गज़ कपड़ा हथकरघों से तैयार करने की योजना है।

★

योजना

गत २६ जनवरी से भारत सरकार "योजना" नाम से हिन्दी में एक पत्रिका प्रकाशित कर रही है। इसका उद्देश्य गाँवों और शहरों, बच्चों और बूढ़ों, लड़कियों और युवतियों में भारत के नव-निर्माण का सन्देश पहुँचाना और साथ ही जनता की आवाज़ सरकार तक पहुँचाना है। हमारी "आपकी राय" स्तम्भ में जनता की आवाज़ गूंज रही है, भले ही वह लाल फीता और नौकरशाही के विरुद्ध जाए।

देखिए किन शब्दों में प्रतिष्ठित हिन्दी पत्रों ने हिन्दी "योजना" का स्वागत किया है :

साप्ताहिक प्रताप कहता है––"सरकारी प्रकाशन होते हुए भी 'योजना' जनसेवा में अपना स्थान बना सकेगी, ऐसी आशा की जाती है।"

अमृत पत्रिका कहती है––"इस पाक्षिक पत्र को अब से बहुत पहले ही प्रकाशित कर देना चाहिए था।"

उजाला कहता है––"प्रकाशन सराहनीय और विषय की आवश्यकता देखते हुए बहुत संवर्धनीय है।"

संसार कहता है––"हम इस कल्याणकारी पत्र की उन्नति की कामना करते हैं और चाहते हैं कि शीघ्र ही इसका प्रकाशन साप्ताहिक रूप में हो। इसमें चित्र भी पर्याप्त रहते हैं और छपाई सफाई सुन्दर।"

अमर ज्योति कहता है–"पत्र की वर्तमान सामग्री से उसका भविष्य उज्ज्वल दीखता है। वह जिस उद्देश्य व ध्येय को लेकर चला है वह निस्सन्देह प्रशंसनीय है।"

भारतीय श्रमिक कहता है––"कलात्मक चित्रों और कार्टूनों से अंक और भी सम्पूर्ण हो गया है। कुल मिलाकर अंक रेखा और संगीत दोनों ही दृष्टि से बहुत ही सम्पूर्ण है। सम्पादक बधाई स्वीकारें।"

यह भारतीय उन्नति का प्रतीक है। साहित्य और आलोचना भी छपती है।

हमारे लेखकों में **वृन्दावनलाल वर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी, रांगेय राघव, नागार्जुन, सत्यकेतु विद्यालंकार, खुशवन्तसिंह, मन्मथनाथ गुप्त, सत्यदेव विद्यालंकार** आदि हैं। हर अंक में बीसियों चित्र होते हैं।

आज ही ग्राहक बनिए। एक प्रति के दो आने और वार्षिक मूल्य २॥) रु०। अपने पुस्तक-विक्रेता से माँगें या लिखें :—

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली–८

Regtd. No.D. 28

हमारे हिन्दी प्रकाशन

	मूल्य	डाक व्यय
जातक कथाएं	०–१२–०	०–४–०
सरल पंचतंत्र भाग–१	०–१२–०	०–३–०
भाग २, ३, ४ तथा ५	०– ६–०	०–२–०
	प्रत्येक	
भारत १९५४	७–८–०	१–६–०
भारत की एकता का निर्माण	५–०–०	१–६–०
स्वाधीनता और उसके बाद	५–०–०	१–६–०
भारत १९५६	४–८–०	१–०–०
शान्ति तथा सद्भावना की ओर	०–८–०	०–२–०
समाज और संस्कृति	०–८–०	०–२–०
छठा साल	१–८–०	०–६–०
नवीन भारत का निर्माण	०–८–०	०–२–०
भारत की लोक कथाएं	१–०–०	०–४–०
हमारा झंडा	०–८–०	०–२–०

	मूल्य	डाक व्यय
अस्पृश्यता निवारण	०–६–०	०–२–०
वैदिक साहित्य	०–६–०	०–२–०
मानव विज्ञान	०–४–०	०–१–०
कबीर एक विश्लेषण	०–६–०	०–२–०
रेडियो विकास योजना	०–६–०	०–२–०
प्रयाग दर्शन	०–४–०	०–२–०
भारत की कहानी	०–१२–०	०–३–०
तीसरा साल	१–८–०	०–६–०
एशिया अफ्रीका सम्मेलन	०–४–०	०–२–०
आदर्श विद्यार्थी-बापू	०–६–०	०–२–०
यह बनारस है	०–४–०	०–२–०
जवाहरलाल नेहरू के भाषण	०–१–०	०–१–०
भाग १, २ तथा ३	प्रत्येक	
गौतम बुद्ध पर महात्मा गांधी के विचार	०–२–०	०–२–०

दस रुपए या इससे अधिक के आर्डर पर डाक व्यय नहीं लिया जाएगा। पोस्टल आर्डर द्वारा रुपया प्राप्त होने पर सुविधा रहती है।

सभी प्रमुख पुस्तक विक्रेताओं से प्राप्त या सीधे लिखें।

बिजनेस मैनेजर—

पब्लिकेशन्स डिवीज़न

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली–८

Printed at the Albion Press, Kashmere Gate, Delhi 6, and Published on behalf of Ministry of Community Development by the Publications Division, Delhi—8.